Con. 3. XI.5.49
320

अंक 11
संख्या 5

शुक्रवार
18 नवम्बर
सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

संविधान का मसौदा–(जारी) 3747–3814

भारतीय संविधान सभा

शुक्रवार, 18 नवम्बर, सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान सभा, कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः 10 बजे, अध्यक्ष महोदय माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में समवेत हुई।

संविधान का मसौदा–(जारी)

श्री रामनारायण सिंह (बिहार: जनरल): सभापतिजी, आज विधान पर बोलने के लिये सबसे पहले मुझे अवसर मिल गया। इसके लिये मैं आपको धन्यवाद देता हूं और अपने को बधाई देता हूं।

सभापतिजी, हमारे देश में प्राचीन काल में एक राजा भारथरी हो गये हैं। संसार का वर्णन करने के समय उन्होंने कहा, एक श्लोक में जिसका आखिरी पद मुझे याद है। उन्होंने कहा–"न जाने संसार: किममृतमय: किं विषमय:" न जाने यह संसार अमृत से भरा हुआ है या विष से भरा हुआ है। यही मेरे कहने का मतलब था। इसी तरह हम लोगों ने बहुत समय लगाया, देश के बहुत रुपये खर्च हुये, बहुत समय लगा, बहुत सी शक्ति लगी। अब विधान करीब करीब तैयार है जो पूर्णतया स्वीकार हो जायेगा। कुछ लोग कहते हैं कि बहुत बढ़िया है। अम्बेडकर साहब को कलियुग का मनु भी कह डाला। एक पक्ष यह कहता है दूसरा पक्ष यह कहता है कि कुछ नहीं है बहुत बुरा है। मैं जहां तक समझता हूं कि राजा भारथरी की भाषा में जब मैं यह सोचता हूं कि अंग्रेज़ यहां के मालिक थे, अब वह चले गये, हम भारतवादी अपना एक विधान बना रहे हैं जिसका मतलब हमारे देश का भावी राज्यप्रबन्ध या शासन होगा। यह विचार कर तो बहुत आनन्द होता है, लेकिन जब जब विधान के अन्दर घुसकर देखता हूं कि इसमें क्या क्या स्वीकृत हुआ है, इसके मुताबिक हमारे देश का शासन कैसे होगा तो बहुत तकलीफ होती है। मैं आपसे कहता हूं कि यह तो ठीक है कि बहुत दिनों से हम लोग गुलाम थे, लेकिन एक जमाना था जब हम लोगों का भी राज्य था, साम्राज्य भी था। जहां-तहां प्रजातंत्र भी चलता था। लेकिन इस विधान में अगर आप देखें तो मालूम नहीं होता कि इस विधान में भारतीयता कौन-सी चीज है। मैं तो यहां तक कहता हूं कि जो लोग इसका इतिहास नहीं जानेंगे, हमारी भावी सन्तान होगी वह तो कहेगी कि यह विधान दिल्ली में नहीं बना था यह लन्दन में बना था। लोगों को यह शक होगा। किसी को यह शक भी होगा कि हिन्दुस्तान के प्रतिनिधियों ने इस विधान को बनाया था या लन्दन के व्हाइटहाउस के अंग्रेजों ने यह कृपा करके बना दिया। ऐसी बातें हो सकती हैं उस विधान के बारे में। इसकी भाषा तो अंग्रेजी है ही यह सब देख रहे हैं। इसमें जैसा मैंने कहा भारतीयता क्या है। अंग्रेज़ चले गये यह तो सही है लेकिन सभापतिजी, दु:ख के साथ कहना पड़ता है कि अंग्रेजीपन हमारे देश के लोगों में, उनके दिमागों में कूट कूट कर भरा हुआ है, और अंग्रेजों

[श्री रामनारायण सिंह]

से छुटकारा पाना जितना कठिन था मैं समझता हूं और लोग भी समझते हैं कि अंग्रेजीपन से छुटकारा पाना उससे भी कहीं अधिक कठिन होगा।

सभापतिजी, यह विधान जब देखते हैं तब मालूम होता है कि कुछ तो ब्रिटिश कान्स्टीट्यूशन से लिया गया है, कुछ अमेरिकन कान्स्टीट्यूशन से लिया गया है। यानी एक तरह की अजीब ढंग की खिचड़ी है जिसको अंग्रेजी में कह सकते हैं 'fantastic mixtures of the various constitutions, obtaining in the world' (विश्व में प्रचलित विभिन्न संविधानों का अनोखा सम्मिश्रण) मैं बहुत अदब के साथ अर्ज करना चाहता हूं कि साहब, पहले तो आप यह बात सोचें कि अंग्रेज़ तो गये, अब हम विधान बना रहे हैं, इस विधान में सरकार कैसी बनेगी। वह सरकार जो बनेगी देश की सेवा करेगी या देश पर शासन करेगी। मैं आपसे कहूंगा कि यदि शासन की बात है, अगर उसमें ऐसी बात है तो आप जान लें कि दुनियां में अब वह समय आ गया है कि उसको शासन नहीं चाहिये, सरकार नहीं चाहिये, गवर्नमेंट नहीं चाहिये। गवर्नमेन्ट की कोई जरूरत नहीं है महात्मा गांधी जी हमारे नेता थे, जो पहले यहां अंग्रेज सरकार थी उसको उन्होंने कहा कि यह तो शैतानी सरकार है। सभापतिजी, मैं तो नहीं समझता कि अब इस दुनियां में कहीं पर कोई ऐसी भी सरकार है जिसे शैतान नहीं कहा जा सके। अब मालूम होता है कि सरकार के माने ही शैतान है। इसलिये हमारे देश को हमारे समाज के लिये सरकार की जरूरत नहीं है। मैंने आरम्भ में कुछ संशोधन भी दिये थे, मंजूर तो नहीं हुए हमारे देश में सेवक मंडल की जरूरत है। "सोसायटी ऑफ सरवेन्ट्स", सरकार नहीं चाहिये। जो हमारे देश की रक्षा करेंगे, सच्ची सेवा करेंगे। लेकिन आज भी जो सरकार है, शासन है उसका दावा तो है कि वह भी पब्लिक सरवेन्ट्स हैं, सेवक हैं, लेकिन जैसा काम देखा जाता है उससे सेवा का क्या सम्बन्ध, बिल्कुल मालिक की बात होती है। लेकिन आज जरूरत है देश को, मैं सीधे-सीधे कह देता हूं कि अब हमारे देश को शासक की जरूरत नहीं है, सेवक की जरूरत है, शासन की जरूरत नहीं है सेवा की जरूरत है। इसके साथ-साथ मैं आपसे कहता हूं कि पहले सिद्धान्त तो यह है, और सारे संसार ने इसको मान लिया है कि किसी मनुष्य को किसी पर शासन करने का अधिकार नहीं है। हिटलर कहता था। इसके अतिरिक्त कोई दुनिया में शासन नहीं कर सकता है। लेकिन वह अपने सारे समाज के साथ चला गया। पहले जमाने में भी लोग थे, राजे महाराजे जो कहते थे कि शासन करना उनका ईश्वरीय हक है लेकिन यह सब विचारों का तो खात्मा हो गया। अभी बहुत से लोग ऐसे हैं जो कहते हैं कि हम पब्लिक सरवेन्ट्स हैं लेकिन काम करते हैं जैसे पब्लिक मास्टर हों।

मैं एक बात और लेता हूं। यह जो हम लोगों ने पास किया है कि यहां के जो पब्लिक सरवेन्ट्स होंगे किसी को पांच हजार वेतन दिया जायेगा किसी को छः हजार होगा किसी का दस हजार भी हो सकता है ऐसा भी होता है। सभापतिजी, कराची कांग्रेस में आप भी थे, हमारे बहुत से और साथी भी थे, और मैं भी था। हम लोगों ने पास किया था कि हाईएस्ट सैलरी यानी हमारे देश में ऊंचे से ऊंचे वेतन होगा पांच सौ, इससे अधिक नहीं। यहां पर जो वेतन चलाये गये थे वह अंग्रेजों के चलाये हुए थे, लेकिन अंग्रेज तो यहां की सेवा के लिये नहीं थे, वह तो लूट के लिये थे, और जिन लोगों को उन लोगों ने यहां पर शामिल किया

अपने कार्य में उनको लूट का हिस्सा दिया। लेकिन दु:ख की बात है कि आज कांग्रेस के प्रतिकूल अपने सिद्धान्तों के प्रतिकूल अपने निर्णय के प्रतिकूल आज भारत के प्रतिनिधि हम लोग यहां जमा होकर प्रस्ताव पास करते हैं कि एक व्यक्ति को पांच हजार दो और किसी को छ: हजार और किसी को दस हजार दो। याद रहे यह सेवा नहीं है। यह शासन है। मैं सारी सभा से पूछता हूं और श्रीमान जी आपसे पूछता हूं कि देश की हालत कैसी है। उस दिन जब हम ने प्रस्ताव पास किया था कि पांच सौ से अधिक वेतन नहीं होना चाहिये, उस समय में और आज में क्या परिवर्त्तन हो गया है। क्या देश में लोगों की आमदनी बहुत कुछ बढ़ गई है? संसार का कानून है कि पब्लिक सर्वेन्ट का वेतन पब्लिक का जो औसत स्टेंडर्ड है उसके मुताबिक होना चाहिये। हमारे देश में 90 प्रतिशत आदमी नहीं समझते कि दिन भर में दो बार भोजन क्या चीज़ कहलाता है। लोग किसी तरह अपना जीवन यापन करते हैं। लेकिन थोड़े से लोगों के सिवा अधिकतर लोग ठीक भोजन नहीं पाते हैं। लोग तो भूखे हैं और आप इस देश में पांच हजार और चार हजार का वेतन रखेंगे, तो लोग कहेंगे कि यह पब्लिक सर्वेन्ट का वेतन है या अंग्रेजों सरीखे डाकुओं की लूट है। मुझे ऐसा कहने के लिये माफ करेंगे, पर मुझे इससे बहुत तकलीफ होती है। मैं बहुत सोचता हूं पर मेरी समझ में नहीं आता कि लोग कहते हैं कि वह पब्लिक सर्वेन्ट हैं यह कैसे ठीक है। कहीं सेवक भी चाहता है कि उसकी आमदनी मालिक से अधिक हो, वह मालिक से अधिक अच्छे-अच्छे खाने खाये और उसको मालिक से अच्छे रहने के लिए महल मिले। हिन्दुस्तान की आम जनता जनार्दन जो कि देश की मालिक है वह तो झोंपड़ों में रहती है और सेवक चार-चार और पांच-पांच हजार तनखाह लेकर महलों में रहें यह ढोंग नहीं है तो क्या है। सीधे-सीधे कहिये कि अंग्रेजों का राज्य गया, हमको राज्य मिला है, हम लोगों पर राज्य करते हैं। लोग जहां के तहां हैं। हम सेवक नहीं शासक हैं। आप जिस तरह से विधान बनाना चाहें बना लें, वेतन जितना चाहें लें, यह सब यही है, लेकिन यह कहना कि हम पब्लिक सर्वेन्ट हैं, यह बात उठा देनी चाहिये, बल्कि यह कहिये कि हम पब्लिक मास्टर हैं। मैं अपने भाइयों से कहूंगा और अर्ज करूंगा कि इस तरह का वेतन का प्रस्ताव और बहुत-सा व्यवहार जो हम कर रहे हैं वह तो कम्युनिस्टों के लिये सीधा निमंत्रण है। दमन करने से कुछ नहीं होगा। कम्युनिस्ट पार्टी के लोगों को जेल में देने से हमारे देश का उद्धार नहीं होगा। इस तरह इस विप्लव से छुटकारा नहीं मिल सकता। अगर आप चाहते हैं कि देश में शान्ति रहे तो आपको इस प्रकार का भेद दूर करना होगा। सबसे पहली बात मैं आप दोनों से कह कहूंगा कि अभी भी समय है कि आप पांच सौ वेतन लें और नहीं तो सीधे-सीधे आपको संसार में कहना पड़ेगा कि हम कुछ भारत वासियों ने जो आगे थे सुविधा पाकर अंग्रेजों की तरह हिन्दुस्तान में राज करना आरम्भ कर दिया है। लेकिन यह हिन्दुस्तान में स्वराज्य चलने की बात नहीं है। मैं कहता हूं कि आप इस पर विचार करें।

सभापतिजी, घंटी तो बज गई है। पर मुझे थोड़ा-सा और अर्ज करना है। इस लिये मुझे एक आध मिनट और मिलना चाहिये।

यह जो विधान बना है इसमें पार्लियामेन्टरी सिस्टम रखा गया है, यानी दलबन्दी का राज। मैं कहता हूं कि यह हिन्दुस्तान के लायक नहीं है। दुर्भाग्यवश हमारे देश

[श्री रामनारायण सिंह]

में तो वैसे ही बहुत दलबन्दी है। कास्ट सिस्टम की दलबन्दी तो यहां पहले ही से है। फिर और आप दलबन्दी कर देंगे। तो क्या होगा। जो आपने दलबन्दी के इस राज्य में सबको फ्रेंचाइज़ का हक दिया है उसके माने होंगे कि उसमें कुछ धूर्त और कुछ धनी मिलेंगे और ऐसा प्रबन्ध करेंगे कि वोट वह ले लेंगे। उनके साथियों की कमी नहीं रहेगी। डिमोक्रेसी इस तरह से नहीं हो सकती है। पाश्चात्य देशों में जिस तरह से यह होता है उसमें डिमोक्रेसी का एक अंश जरूर है लेकिन उसको डिमोक्रेसी नहीं कहा जा सकता है। मैं तो कहता हूं कि दलबन्दी का राज्य तो डिमोक्रेसी पर कुल्हाड़ी मारता है। उसमें भी तो दो चार आदमियों का राज्य रहता है। दो चार धूर्त और दो-चार धनी मिलकर वोट ले लेंगे और राज करेंगे। यह तो ठीक है कि पंचायती राज्य में हर एक का एक वोट होना चाहिये और यह भी ठीक है कि किसी बात का निर्णय बहुमत से ही होगा। पर उन निर्णय को करने के लिये हर एक आदमी को किसी दल का नहीं होना चाहिये। यह नहीं होना चाहिये कि एक बात पार्टी में पास हो गई इसलिये वोट दे दिया या लीडर ने कह दिया तो वोट दे दिया। हर एक वोटर बिल्कुल स्वतन्त्र हो और ईमानदारी के साथ वोट दे। उससे जो फैसला होगा वह डिमोक्रेसी का फैसला होगा और वही देश के लिये कल्याणकर होगा। नहीं तो किसी पाटी के लीडर ने कह दिया और शेष ने वोट दे दिया यह होगा। इस तरह का फैसला जो होगा वह डिमोक्रेसी का फैसला नहीं होगा वह पंचायत का फैसला नहीं होगा। हमारे देश में पंचायत राज के बारे में कहते हैं कि पंच परमेश्वर होता है। ऐसा परमेश्वर नहीं कि एक परमेश्वर के मातहत बहुत से छोटे-छोटे परमेश्वर हों। ईश्वर के माने हैं कि जितने बैठे हुये हैं सब स्वतन्त्र हैं और किसी के अधीन नहीं हैं। और किसी का मुंह देख फैसला नहीं करते हैं, न इस तरह वोट देते हैं।

सभापतिजी, मेरा समय हो गया है इस लिये मैं और अधिक नहीं कहूंगा। पर एक बात और कह देना चाहता हूं जैसा कि और लोगों ने भी कहा है हमारे देश के विधान में गौवध एकदम बन्द होना चाहिये। आप किसानों की हालत देखें कि वह बैलों के बिना खेतियां छोड़ रहे हैं।

इसी के साथ हिन्दी भाषा के लिये मैं यह कहना चाहता हूं कि हमारे दखिनी भाइयों ने हिन्दी भाषा को पास तो कर दिया है। पर वह समझते हैं कि हम अपनी भाषा उनके ऊपर लादना चाहते हैं। मैं तो समझता हूं कि यह देश मेरा देश है और इसकी सारी भाषायें मेरी भाषायें हैं। अगर मैं तमिल और तेलगू भाषायें नहीं जानता हूं तो इसके मानी यह हैं कि यह मेरी कमी है और अगर मैं इन भाषाओं को सीखता हूं तो मैं किसी पर अहसान नहीं करता हूं, केवल अपनी योग्यता ही बढ़ाता हूं। तो इस तरह देश की जितनी भाषायें हैं वह हमारी भाषायें हैं ऐसा हमको मानना चाहिये। हां नेशनल भाषा के तौर पर एक भाषा को चुनना था। अब जो हिन्दी भाषा को चुना गया है तो इसको अपनी भाषा समझ कर चलाया जाये। हममें से कुछ यह समझते हैं कि वह अंग्रेजी पढ़कर पंडित हो गये हैं पर उनके बार-बार अंग्रेजी बोलने से हमको बार-बार अपनी अंग्रेजी की गुलामी का ही स्मरण होता है। अंग्रेजी तो हमने केवल अंग्रेजों के वास्ते सीखी थी। इसलिये इसको जहां तक

जल्दी हो हमको इसे छोड़ देना चाहिये। और अपनी राष्ट्रभाषा को उसकी जगह लाना चाहिये। पन्द्रह बरस बाद अपनी भाषा को लाने की बात तो उसको टालने वाली बात है। अपनी भाषा की हमको जहां तक हो सके जल्दी उन्नति करनी चाहिये ताकि अंग्रेजी भाषा की आवश्यकता न रह जाये।

इसके बाद, सभापतिजी, मैं एक बात और अर्ज करूंगा। दुनिया के जितने विधान हैं सबमें आम तौर पर फंडामेन्टल राइट्स में हथियार रखने का हक होता है। मैं कहता हूं कि वह विधान जिसमें हर आदमी को अपने स्वाभाविक हक के अनुसार जो कि ईश्वर दत्त हक है जितने हथियार चाहे रखने का हक नहीं है तो वह विधान कुछ नहीं है। आप जानते हैं कि सरकार रक्षा करने का भार लेती है मगर वह हर एक व्यक्ति के पीछे नहीं बैठ सकती है और न हर एक व्यक्ति के घर में ही बैठ सकती है। लेकिन सरकार हर फैमिली और हर व्यक्ति को कम से कम इतने शस्त्र से सुसज्जित रखे जितनी कि रक्षा करने के लिये जरूरी हों। तो मैं यह कहता हूं कि कम से कम यह तो कर दिया जाये जिससे हिन्दुस्तान के प्रत्येक व्यक्ति को हथियार रखने का अधिकार हो जाये। और आज कल जैसा चल रहा है उसके लिये मुझे दु:ख है और मैं आशा करता हूं कि सरकार जल्दी से जल्दी इसको दूर करेगी।

मैंने कुछ ज्यादा समय ले लिया है इसके लिये मैं क्षमा चाहता हूं। जैसा कि मैंने कहा है और मैं बार-बार अर्ज करता हूं कि जो यह तीन चार बातें हैं वह जल्द खत्म हों। जो घोर पाप और बुराई हो रही है वह भी समाप्त हो। इतना कहकर मैं अपना भाषण समाप्त करता हूं।

***श्री कुलधर चालिहा** (आसाम: जनरल): अध्यक्ष महोदय, आरम्भ में ही यह आवश्यक है कि मसौदा समिति और विशेषकर डॉ. अम्बेडकर की इस बात के लिये प्रशंसा की जाये कि जिन कठिनाइयों का उन्हें सामना करना पड़ा उनके होते हुए भी उन्होंने ऐसा आश्चर्यजनक संविधान प्रस्तुत किया। हमें मसौदा समिति के सदस्यों की भी प्रशंसा करनी चाहिये और विशेषकर श्री मुंशी की जिन्होंने कई विषयों में लगे रहने पर भी सदैव समझौते की सूरतें पैदा करने का प्रयास किया और इस रूप में हम उनके कार्यों की बड़ी प्रशंसा करते हैं तथा उन सब चुपचाप काम करने वालों तथा कर्मचारी वृन्द की प्रशंसा करते हैं जिन्होंने इस संविधान के सफल निर्माण में अपना महान सहयोग दिया। श्रीमान, यह कहना आवश्यक है कि चाहे हमसे सर्वोत्तम संविधान न बन पाया हो पर साथ ही साथ हम यह अवश्य कहेंगे कि भारत में वर्तमान दशाओं के अधीन हम जैसे संविधान बना सकते थे उनके सर्वोत्तम संविधानों में से एक यह भी है। उन्होंने तथ्यों का सामना किया और एक ऐसा संविधान बनाया जो आवश्यक था। यह कहा जाता है कि मसौदा समिति के सदस्य स्वातन्त्र्य युद्ध में आगे नहीं आये थे पर मैं समझता हूं कि इससे लाभ ही हुआ क्योंकि वे निष्पक्ष होकर विचार कर सके और एक ऐसा संविधान बना सके जो आवश्यक था। तृतीय पठन की चर्चा के आरम्भ में हमने श्री मुनिस्वामी पिल्ले से यह सुना कि छ: करोड़ अछूतों को इस संविधान से समाधान हो गया है। यह वास्तव में एक महान कार्य है और जिन अछूतों की हम उपेक्षा करते चले आये थे उनका यदि हमने समाधान कर दिया तो मैं समझता हूं कि हमने एक आश्चर्यजनक कार्य कर लिया। अत: मेरी प्रशंसा तो पूर्णतया मसौदा समिति

[श्री कुलधर चालिहा]

और उन कर्मचारियों के लिये है जिनका इसके बनाने में कोई हाथ न होते हुये हुये भी उन्होंने घोर परिश्रम किया और यह पुस्तक तैयार की जो हमारे सामने है।

अत: श्रीमान, मैं निवेदन करता हूं कि हमने एक ऐसा संविधान तैयार किया है जो यद्यपि यह सत्य है कि एक उस स्तर का संविधान नहीं है जैसा हममें से कुछ लोग चाहते थे परन्तु फिर भी मैं समझता हूं कि निदेशक सिद्धान्तों के अधीन हमने ऐसी बहुत सी बातें रखीं हैं जिससे हममें से प्रत्येक व्यक्ति का समाधान हो जायेगा। यदि कोई व्यक्ति समाजवादी है तो उसके विचारों के अनुकूल उसमें समता का अधिकार है। यदि कोई व्यक्ति अछूत है तो उसके हितों की संरक्षा के लिये हमने कुछ संरक्षण रखे हैं। यदि कोई कोई व्यक्ति "पिछड़ा हुआ" है तो उसके हितों के सम्बन्ध के उपबन्ध भी हमने रखे हैं। अत: हम उसे चाहे किसी दृष्टि से देखें, हमें यह विदित होता है कि जो संविधान हमने बनाया है उससे अच्छा संविधान हम नहीं बना सकते थे।

श्रीमान, यह सत्य है कि नागरिकता की परिभाषा पर बड़ी ही सद्भावना से विचार किया गया है पर उसमें एक ऐसी कमी है जिसके कारण संभव है कि हम स्वयं धोखा खा जायें। यदि कोई व्यक्ति 19 जुलाई से छ: महीने पहले आ जाता है और भारत सरकार द्वारा नियुक्त पदाधिकारियों द्वारा पंजीबद्ध कर लिया जाता है तो वह नागरिक हो सकता है। पर जब आप इसे आसाम जैसे प्रान्त को लागू करेंगे तो आपको बड़ी कठिनाई होगी। आप विघटन की ओर अग्रसर होंगे। अत: जब यह लागू होगा तो हमें बहुत सावधान रहना पड़ेगा और हमें इस बात पर ध्यान रखना पड़ेगा कि हम उन उच्च सिद्धान्तों में न बह जायें जो इस संविधान में निर्धारित कर दिये गये हैं। अत: इस तथ्य के होते हुए भी कि नागरिकता की परिभाषा बड़ी अच्छी तरह से बनाई है, पर फिर भी उसको यदि आप इस प्रकार से लागू करना चाहते हैं जिस प्रकार से हमने यहां रखी है तो उसमें कुछ थोड़ा-सा संकट है। आसाम से हमारे पास तार आ रहे हैं कि हम नाश की ओर अग्रसर हो रहे हैं। शायद यहां प्रत्येक सदस्य को आसाम से तार पर तार मिल रहे हैं कि इस सिद्धान्त को कुछ रोक थाम के साथ हम पर लागू करना चाहिये, नागरिकता की इस परिभाषा में कुछ रोकथाम लगा कर हमें आसाम में लागू करना चाहिये और इस संविधान में इस बात पर ध्यान दिया जाये।

निदेशक सिद्धान्तों में हम देखते हैं कि एक ऐसा निदेशक है जो जनसाधारण के लिए अहितकारी रूप में संपति संचय में रुकावट डालता है। संपत्ति विभाजन में परिवर्तन करने के लिये कोई रुकावट नहीं है, यदि रुकावट है तो यही कि संविधानिक रूप में हमें ऐसा करना चाहिये। अत: जो कुछ संभव हो सकता था वह संविधान में है और हम जानते हैं कि यदि उसका ठीक ढंग से उपयोग किया गया तो हम एक सच्ची लोकतन्त्रात्मक सरकार का निर्माण कर सकेंगे।

श्रीमान, हमारा संविधान वास्तव में अमरीका और इंग्लैंड के संविधानों का सम्मिश्रण है और बीच-बीच में कनाडा के संविधान का पुट्ट है। अमरीका के संविधान से

हमने राष्ट्रपति को यह प्राधिकार दिया है कि वह स्वयं कार्यपालिका का रूप धारण कर सकता है और शासन चलाने के लिये अपने आदमी नियुक्त कर सकता है। पर इसमें एक दोष भी है। इंग्लैंड का संविधान भी है जिसमें बहुसंख्यक वर्ग के पक्ष के नेता को ही आमंत्रित किया जायेगा। अमरीका के संविधान में मंत्रियों का कांग्रेस से कोई सम्बन्ध नहीं है। मंत्री केवल राष्ट्रपति के प्रति उत्तरदाई हैं न कि सदन के प्रति। पर हमने अपने संविधान में यह रखा है कि हमारा प्रधानमंत्री सदन के प्रति उत्तरदाई है। इसमें भी एक छोटा-सा दोष है। वह लगभग बारह सदस्य मनोनीत कर सकता है। वह अपना मंत्रिमंडल भी उनमें से बना सकता है, ऐसा करने में उसके लिये कोई रुकावट नहीं है, मनोनीत सदस्यों में से, जिन्हें विज्ञान, कला और साहित्य और सामाजिक सेवा का विशिष्ट ज्ञान है, मंत्रिमंडल के सदस्य चुनने में उसके लिये कोई रुकावट नहीं है। मुख्य मंत्री यह कर सकता है। पर आधुनिक समय में हमें "मनोनीत सदस्य" जैसी कोई असामयिक बात नहीं रखनी चाहिये। कला, साहित्य इत्यादि का प्रतिनिधित्व करने वाले भिन्न-भिन्न संस्थायें अपने में से प्रतिनिधि चुनने के लिये हम रख सकते थे पर यदि आप राष्ट्रपति को इस प्रकार अपना प्रधानमंत्री और मंत्रिमंडल चुनने देते हैं तो हम लगभग सब मंत्रियों को मनोनीत सदस्यों में से रख सकते हैं। यह सत्य है कि वर्तमान नेताओं से इस प्रकार के संकट की आशा नहीं है। पर हमें तो एक ऐसा संविधान बनाना है जिसमें मूर्खता ही नहीं वरन दुष्टता तक भी प्रवेश न कर सके। कुछ काल पश्चात् कुछ ऐसे लोग आ जायें जो दुष्ट हों और इस लिये हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि हमारे संविधान में दुष्टता भी प्रवेश न कर सके। संभव है आगामी दस वर्षों में हमें इसमें परिवर्त्तन करना पड़े। वर्तमान समय में इस प्रकार का कोई संकट नहीं है और आगामी बीस वर्षों तक हम यह सोच सकते हैं कि राष्ट्रपति एक ऐसा व्यक्ति होगा जो अपनी शक्तियों का दुरुपयोग नहीं करेगा। अत: हमें इस बात से सतर्क रहना चाहिये कि संविधान इस प्रकार से कार्यन्वित न किया जाये कि मंत्रिमंडल में केवल मनोनीत सदस्य ही आयें।

श्रीमान, इस संविधान में एक और दोष है और वह यह है यह कहा गया है कि मंत्री को सदन का सदस्य बनना पड़ेगा। वह मनोनीत सदस्य भी हो सकता है। यह आवश्यक नहीं है कि वह एक निर्वाचित सदस्य हो। इस 'निर्वाचित' शब्द को छोड़ दिया गया है और यदि यह जानबूझ कर छोड़ा गया है तब तो यह संकट जनक बात है और लोकतन्त्र पर भीषण आघात है। मेरा विचार यह है कि हमें इसे 'निर्वाचित सदस्य' कर देना चाहिये न कि 'सदन का सदस्य' जैसा कि इस समय है। वह सदस्य राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत हो सकता है और वह मंत्रिमंडल का मंत्री भी हो सकता है। अत: मैं निवेदन करता हूं कि भविष्य के लिये इस कमी को भी दूर करना चाहिये और इस बात को हमें बहुत दिनों तक के लिये नहीं रहने देना चाहिये।

इसके पश्चात् हम देखते हैं कि न्यायपालिका के वेतन के बारे में हम बहुत ही चिन्तित रहे हैं। मैं नहीं समझ पाता कि हम इतने चिन्तित क्यों रहे, ऐसा प्रतीत होता है कि मानो हम इस बात से भयभीत थे कि यदि हमने इनको कम वेतन दिये और उनके लिये निवास स्थान इत्यादि की व्यवस्था नहीं की तो वे क्षुब्ध हो जायेंगे। मैं समझता हूं कि बाबू रामनारायण सिंह ने पदाधिकारियों के उच्चतर वेतन के प्रति इस चिन्ता के बारे में ठीक-ठीक कहा है। यह सत्य है कि हमने

[श्री कुलधर चालिहा]

500 रुपये का आदर्श आरम्भ में अपनाया था पर हमने देखा कि अब कुछ ऐसे परिवर्तन हो गये हैं और वर्तमान वस्तुस्थिति ऐसी हो गई है कि आरम्भ में जिस स्तर को हमने अपनी दृष्टि के सन्मुख रखा था उस स्तर पर आना कदाचित अब सम्भव नहीं है। परन्तु फिर भी हमें यह मालूम होता है कि जो वेतन नियत किये गये हैं वे इतने अधिक हैं कि शीघ्र ही मेरे विचार से हमें इनका पुनरीक्षण करना पड़ेगा।

एक बात और है। महाभियोग द्वारा न्यायपालिका के हटाने का हमने उपबन्ध किया है। पर यह कोई बहुत अधिक सुरक्षित प्रस्थापना नहीं है। मेरे विचार से सर्वोत्तम मार्ग यह होता कि उच्चतम न्यायालय के तीन न्यायाधीशों को चुना जाता है और वे यह निश्चय करते कि न्यायाधीश दुर्व्यवहार, कदाचार अथवा रिश्वत् का अपराधी है या नहीं। अन्यथा यदि हम इस प्रकार न्यायाधीश पर महाभियोग चलाने देंगे तो कदाचित समस्त देश का वातावरण दूषित हो जायेगा और लोग पक्षपात करने लगेंगे और आगे चल कर यह हो सकता है कि इन भावनाओं और पक्षपातों के कारण दोषी व्यक्ति बच जाये और निर्दोष व्यक्ति पर दोषारोपण हो जाये। अत: मेरे विचार से न्यायाधीश के अपराधी या निरपराधी होने पर विचार करने के लिये हम एक न्यायाधिकरण रखते—एक ऐसा न्यायाधिकरण जिसमें उच्चतम न्यायालय का मुख्य न्यायाधिपति होता। यह एक अधिक अच्छा उपबन्ध होता।

इसके बाद मैं देखता हूं कि राज्य के विधान मंडलों में कई प्रान्तों के लिये उत्तर सदनों की व्यवस्था की गई है। इन दिनों में जब कि प्रत्येक राष्ट्र ऐसे उत्तर सदनों को मिटाने का प्रयास कर रहा है यह बात कदाचित असामयिक है। इन उत्तर सदनों में हमें आसक्त नहीं होना चाहिये। इन जीर्ण शैली के निकायों से वाद विवाद में कोई सहायता नहीं मिलेगी। और हम यह देखते ही हैं कि लार्ड सभा में ऐसे लोग बहुत कम हैं जो वास्तव में कोई नया विचार प्रस्तुत करते हों। अत: मेरा निवेदन यह है कि इन उत्तर निकायों को हमें अभी या बाद में मिटा देना चाहिये। हम यह जानते हैं कि लार्ड सभा तक लगभग शक्तिहीन सी ही है और मैं नहीं समझ पाता हूं कि अब भी हम इस समय में इन उत्तर सदनों की स्थापना के लिये इतने उत्सुक क्यों हैं। अत: मेरा निवेदन यह है कि संविधान के आगामी पुनरीक्षण में हम इस बात का ध्यान रखें और इस उपबन्ध के पुनरीक्षण करने का प्रयास करें।

राज्याधिकार का एक छोटा-सा चिन्ह यहां पाया जाता है कि जब किसी विधेयक को दोनों सदनों ने पारित कर दिया है तो राष्ट्रपति उसे अपने संदेश सहित पुनर्विचार के लिये वापस कर सकता है। यह वास्तव में राज्याधिकार का चिन्ह है और मैं यह नहीं समझ पाता कि राष्ट्रपति को इतनी शक्ति क्यों दी जाये या हम उसको इतना बुद्धिमान क्यों मान लें कि वह उन विधेयकों तक को वापस कर दे जिन को दोनों सदन पारित कर चुके हैं। यह शक्ति आवश्यकता से अधिक है और मेरे विचार से इसे शीघ्र संविधान से निकाल देना चाहिये।

जैसा कि मैं बहुत पहले कह चुका हूं, मेरा छठी अनुसूची पर घोर विरोध है जिसको इस संविधान में अधिनियमित कर दिया है। इसका इस गलत आधार

पर निर्माण किया गया है कि जनजातियों का विचार यह है कि हम उनके शत्रु हैं। अंग्रेजों ने उनमें यह विचार भरा था। उन्होंने जनजातियों को पृथक रखा और उनका मेल जोल नहीं होने दिया। अंग्रेज जब यहां से गये तो उनसे कहा कि "भारतीय-अर्थात् हिन्दू शत्रु हैं। हम तुम्हारे मित्र हैं।"

वे उनके मित्र हैं क्योंकि दोनों गौ-मांस खाते हैं। उन्होंने पहाड़ी जन-जातियों से देश को जीता और उनके छोड़ने पर सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता फिर जनजातियों के हाथों में आ गई। प्रादेशिक परिषदें और जिला-परिषदें संसदों से भी बड़ी हो गई हैं। इस स्थिति को श्री मुंशी ने कुछ थोड़ा बहुत ठीक किया है। अत: इस रूप में मैं समझता हूं कि हम एक कठिन परिस्थिति की ओर अग्रसर हो रहे हैं और यदि जनजातियां हमारे लिये उपद्रव खड़ा करें तो उसका कारण हम स्वयं ही हैं। पर एक बात अच्छी है और वह छठी अनुसूची की कंडिका 21 है जो इस प्रकार है:

(1) संसद समय-समय पर विधि द्वारा जोड़, परिवर्तन या निरसन करके इस अनुसूची के उपबन्धों में से किसी का संशोधन कर सकेगी, तथा जब अनुसूची इस प्रकार संशोधित की जाये, तब इस संविधान में इस अनुसूची के प्रति कोई निर्देश इस प्रकार संशोधित अनुसूची के प्रति निर्देश समझा जायेगा।

(2) कोई ऐसी विधि जो इस कंडिका की उपकंडिका (1) में वर्णित है इस संविधान के अनुच्छेद 368 के प्रयोजनों के लिये इस संविधान का संशोधन नहीं समझी जायेगी।

अत: हमें बहुत सावधान रहना चाहिये और संसद की पहली बैठक में इसका संशोधन हो जाना चाहिये; अन्यथा हम नाश की ओर उन्मुख होंगे और ऐसे कई क्षेत्र तथा स्थल होंगे जिनमें उपद्रव हो जायेंगे।

इसके पश्चात् श्रीमान, आसाम के नाम के संबंध में मुझे आसाम के मुख्य मंत्री माननीय श्री गोपी नाथ बारदोलोई से विदित हुआ है कि नाम परिवर्तन से वे सहमत हो चुके हैं और इस बात को मंत्रिमंडल में तय कर लिया गया है। उन्होंने मसौदा समिति को मेरे ख्याल से 12 तारीख को तार भेजा था। पर वह उन्हें प्राप्त नहीं हुआ। मेरा विश्वास है। कि धारा 391 के अधीन संविधान के उद्घाटन के पश्चात् राष्ट्रपति इस नाम को 'आसोम' में बदलते हुये प्रथम अनुसूची को संशोधित करेगा।

एक बात और है जिसका मैं जिक्र करना चाहता हूं और वह भाषा के बारे में है। इस समय 'आसामीज' शब्द का प्रयोग किया गया है। श्री साहू ने एक इस प्रकार के संशोधन की सूचना दी है कि उनको 'आसामिया' कहा जाये। मैं आशा करता हूं उन छोटे-छोटे दोषों को यथासमय दूर कर दिया जायेगा।

मुझे फिर उन सदस्यों को धन्यवाद देना चाहिये जिन्होंने इस संविधान के वाद-विवाद में सहयोग दिया जो बहुत सोच समझ कर बनाया गया है। मैं यह भी कहूंगा कि जो सदस्य इस समय दोष निकाल रहे हैं वे उन उपबन्धों से पक्ष के अधिवेशन में तथा यहां इस सभा में भी सहमत हो चुके थे और अब दोष निकालना शोभा नहीं देता।

***श्रीमती ऐनी मेस्करीन** (तिरुवांकुर राज्य): अध्यक्ष महोदय, इस अवसर पर, जब कि सभा संविधान पर अपना अन्तिम निर्णय पारित करने के लिये समवेत हुई है, भाषण देना मैं गौरव समझती हूं। यह हमारा प्राचीन उप-महाद्वीप जो राष्ट्र के लिये राजनैतिक प्रयोगों की प्रयोगशाला रहा, जो एक ऐसी सराय रहा जिसमें एक राष्ट्र के पश्चात् दूसरा राष्ट्र और एक सुलतान के बाद दूसरा सुलतान आया और अपना काम करके चला गया, श्रीमान उस देश में हम उस ऐतिहासिक घटना का सूत्रपात करने वाले हैं जिसके द्वारा उस देश की जनता की सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न इच्छा के आधार पर दृढ़ संकल्प होकर एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नगणराज्य घोषित करेंगे तथा उसके सब नागरिकों को न्याय, स्वातंत्र्य, समता और बन्धुता प्राप्त करायेंगे। श्रीमान, संसार के इतिहास में इतने महान तथा विशाल जन समूह युक्त राष्ट्र ने अहिंसा, सभ्यता और त्याग के इतिहास और परम्परा से युक्त होकर संसार के सर्वोच्च शक्तिशाली साम्राज्य से एक ऐसे महान नेतृत्व के अधीन, जो समय के समक्ष आकाशदीप की तरह स्थिर है, कभी युद्ध नहीं किया और न उसे पराजित किया तथा लोकतंत्र संविधान बनाने के लिये कभी अपनी सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न इच्छा की घोषणा नहीं की है। इतिहास में दो विश्व-युद्धों की समाप्ति के पश्चात् जब कि घोर वैमनस्य छाया हुआ है, जब कि तर्क और बुद्धि को अमान्यता दी जाती है तथा स्वातंत्र्य, समता और बन्धुता के सिद्धान्त हमारे कानों में मादक गान प्रतिध्वनित कर रहे हैं—ऐसे समय में श्रीमान, हमने—संसार के महानतम राष्ट्र में अपने संविधान का निर्माण करना विनिश्चित किया है।

इस संसार में क्रान्तियां हुई हैं और जैसा जर्मनी, फ्रांस, रूस और चीन में हुआ—समय द्वारा उद्‌भूत भावनाओं के प्रवाह में संविधान बहे चले गये। पर हमारी वह अनूठी जाति है जिसने विदेशी सत्ता का सामना किया है और जो शताब्दियों तक संघर्ष करती रही और राष्ट्रीय सुदृढ़ता के ढांचे को ध्वंस किये बिना आत्मोद्वेलित त्याग की शक्ति के कारण जो जीवित रही है इन आधारों पर हमने लोकतंत्रात्मक रूप के एक सुन्दर भवन का निर्माण किया है जो संसार के विशाल भवन का मुकाबला करेगा।

हजारों वर्षों के अनुभव और बुद्धि विकास के कारण राजनैतिक प्रयोग में हम उच्च शिखर पर पहुंचे हुए हैं जिसकी खोज प्राचीन यूनान तथा रोम तक की जा सकती है। श्रीमान, मेरा कार्य यह नहीं है कि इस सभा के सामने खड़ी होकर मैं अपनी सफलताओं का यशोगान गाऊं। इसे हम सन्ततियों के निर्णय तथा इतिहास लेखकों के कथनों के लिये छोड़ दें। यह पहला उदाहरण है जब कि भारत जैसे महाद्वीप-राज्य में विभिन्न हितों के व्यक्ति, ऐसे नियम तथा विनियम निर्धारण करने के लिये जो भविष्य में राष्ट्रीय जीवन बिताने में हमारा मार्गप्रदर्शन करेंगे, एक समाज बनाने के लिये स्वयं संगठित हुये हैं। संसार के अन्य राष्ट्रों के समान हम लोगों में अनोखी अनोखी बातें हैं। हममें जाति, सम्प्रदाय और मत सम्बन्धी विभिन्नतायें हैं; अस्पृश्यता का प्रश्न है; दलित जातियों का उद्धार, जनजातियों के लिये उपबन्ध, मुसलमान, सिख, इसाई जैसे धर्म तथा भाषा के आधार पर अल्पसंख्यक वर्गों का विचार, उनके परिमाण और रक्षण: और फिर शासकों की तथा ज़मीदारों की स्थिति, उनके परिमाण और रक्षण का प्रश्न, और इसके बाद स्थितियों के अधिकार—इन

सब पर विचार करना पड़ा, सब में मेल बिठाना और उनको संविधान में रखना पड़ा। यह कहना पड़ेगा कि यह श्रेय राजनैतिक विज्ञान तथा संविधानिक विधि के महान विद्वान के नेतृत्व के सहित मसौदा समिति को है और माननीय सदस्यों द्वारा पेश किये गये संशोधनों के लिये उनको धन्यवाद है कि जिनके कारण इस संविधान में उन अधिकारों के समाविष्ट करने का सफल प्रयत्न हुआ है। हमारा संविधान आज उन मूलाधिकारों की घोषणा सहित संसार की भेंट है, जिनकी खोज अधिकारपत्रों तथा अधिकार-विधेयक तक की जा सकती है—ये वे अधिकार हैं जिनको 18वीं शताब्दि के राजनैतिक विचारकों ने मानवता के लिये नियत किया और जो उन संविधानों में रखे गये जिनका निर्माण उस समय के बाद में हुआ। और समस्त संसार यह देख सकता है कि वे अधिकार हमारे संविधान में भी रखे गये हैं। अत: व्यक्ति स्वातंत्र्य, मत-स्वातंत्र्य, धर्म तथा अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य, जीवन स्वातंत्र्य तथा सम्पत्ति की क्षेम, सुख की खोज इन सबका हमारे संविधान के अन्तर्गत प्रत्येक व्यक्ति को आश्वासन दिया गया है और उसको ये सब प्राप्त है। यह लोकतंत्र पर आधृत संविधान है और इसमें बीते युगों का समस्त अनुभव तथा ज्ञान है; मुझे अपने संविधान की विलक्षणताओं पर कुछ बातें कहनी हैं।

हमारे संविधान की रूपरेखा अमरीका के संविधान के आधार पर बनाई गई है। अर्थात् यह एक फेडरल संविधान है जिसमें शक्ति केन्द्र तथा स्थानीय सरकारों में विभक्त है। यह हमारे लिये कोई नवीन बात नहीं है। यह बात स्विटजरलैंड के संविधान के आधार पर है जिसको अमरीका ने ग्रहण किया, आस्ट्रेलिया और कनाडा ने जिसका अनुसरण किया और आज वह संसार के महानतम लोकतंत्रात्मक राष्ट्र द्वारा परिक्षित तथा अंगीकृत हुआ। पर यह समानता तो यहीं समाप्त हो जाती है। यद्यपि हमारे संविधान की रूप रेखा अमरीका के संविधान के समान है पर राष्ट्रपति की कार्यपालिका शक्ति के सम्बन्ध में वह भिन्न है। अमरीका के राष्ट्रपति से भिन्न रूप में हमारा राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद द्वारा मंत्रणा प्राप्त करता है जिसको मंत्रिमंडल का पद प्राप्त है और जिस पर संसदीय उत्तरदायित्व तथा मंत्रणा सम्बन्धी आभार है: यहां तक कि हमारा संविधान लिखित संविधान की कठोरता और इंग्लैन्ड के संविधान की अभिसमय सम्बन्धी समायोजनों का मिश्रण है। कठोरता के साथ-साथ हमने शक्तियों के पर्थिक्य का भी समावेश किया है जो उतना ही कठोर है जितना कि लोकतंत्रात्मक सिद्धान्तों पर आधृत किसी अन्य संविधान में वह कठोर होता है। अपने मूल तथा अपीलीय क्षेत्राधिकार के सहित और संविधान के निर्वचन के अधिकार के सहित हमारी न्यायापालिका अमरीका की न्यायपालिका से भिन्न है। जिसको कार्यपालिका तथा विधान सम्बन्धी कार्यों के न्यायिक पुनर्विलोकन का अधिकार है।

मेरे कुछ विद्वान मित्रों ने हमारे संविधान में कई त्रुटियां बताई हैं। उनका कहना है कि इसमें हमारे आदर्श और सिद्धान्त पूर्ण रूप से नहीं आ पाये हैं। क्या मैं उनका ध्यान उन संविधानों की ओर आकर्षित कर सकती हूं जिनका निर्माण अब तक संसार में के लोकतंत्रात्मक देशों ने किया है? अमरीका के संविधान को देखिये। उस समय का ध्यान करिये जो इसको यह अन्तिम रूप देने में लगा। स्वाधीनता की घोषणा के पश्चात् फिलाडेल्फिया के सम्मेलन की स्वाधीनता की घोषणा के

[श्रीमती ऐनी मेस्करीन]

ग्यारह वर्ष के पश्चात् तक क्या इसमें कई परिवर्तन नहीं हुए और तब इसका यह अन्तिम स्वरूप हो पाया? क्वेबेक सम्मेलन में अन्तिम रूप में निश्चित होने के पूर्व क्या कनाडा के संविधान में इतने अधिक परिवर्तन नहीं हुये? आस्ट्रेलिया के संविधान को देखिये। क्या उसमें बहुत से परिवर्तन नहीं हुये और क्या उसे सिडनी के सम्मेलन तक की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी? दक्षिणी अफ्रीका का एक संविधान था जो वहां के मूलनिवासियों से भेद विभेद बरतते हुये केवल श्वेत जाति के लिये संविधान था। उस संविधान तक को अपना अन्तिम स्वरूप प्राप्त करने के लिये 1943 तक प्रतीक्षा करनी पड़ी। हमारे समक्ष जो अन्य लोकतंत्रात्मक देश हैं यदि आप उनके संविधानों पर दृष्टि डालें तो आप को विदित होगा कि फ्रांस ने वेस्टील पर आक्रमण करने के साथ-साथ अपना संविधान आरम्भ किया और अपना संविधान बनाने में उसे 100 वर्ष तक ठहरना पड़ा। और इस काल में एक एकाधिपति शासन पद्धति और गणतंत्रात्मक शासन पद्धति के बीच में लटकता रहा। क्या आज संसार में कोई अन्य राष्ट्र ऐसा है जिसने जानबूझ कर एक ऐसी संविधान सभा का निर्वाचन किया हो जो लगातार तीन वर्ष तक समवेत हुई हो और अपना संविधान बनाया हो? क्या मैं अपने माननीय मित्रों का ध्यान इस तथ्य की ओर आकर्षित कर सकती हूं कि हमने लोकतंत्र पर आधृत एक आदर्श संविधान बनाया है और यह संविधान अमरीका के संविधान के समान तब तक काल के थपेड़ों में अचल खड़ा रहेगा जब तक संसार को यह सिद्ध न कर दे कि भारत जैसा एक महाद्वीप एक लोकतंत्रात्मक संविधान बना सकता है और समस्त संसार को यशस्वी करने के लिये उसको कार्यान्वित भी कर सकता है।

अब मैं अगले प्रश्न पर आती हूं वह यह है कि हमने आवश्यकता से अधिक केन्द्रीयकरण किया है जिसके कारण राज्यों की शक्तियों की उपेक्षा हुई है। हम लोकतन्त्र के द्वार पर खड़े हुये हैं। लोकतंत्र में यह एक प्रवृत्ति होती है कि अनिश्चित भावनाओं तथा विघटनात्मक बलों को ढील मिल जाती है। ऐसी परिस्थितियों में बिना एक सुदृढ़ केन्द्र के मैं नहीं समझती हूं कि हम लोकतंत्र को सफल बना सकते हैं। हम राष्ट्र निर्माण के कार्य को आरम्भ कर रहे हैं। एक राष्ट्र के रूप में हमें जीवित रहना है। इस अन्तर्राष्ट्रीय संघर्ष युक्त संसार में एक राष्ट्र के जीवित रहने का प्रश्न है। जब यह बात है तो हमें एक दृढ़ केन्द्र के पक्ष में विनिश्चित करना है। यदि किसी पक्ष के लिये नेता आवश्यक है तो क्या राष्ट्र एक दृढ़ केन्द्रीय सरकार न रखे? अमरीका ने एक दृढ़ केन्द्रीय सरकार रखना विनिश्चित किया। कनाडा ने एक दृढ़ केन्द्रीय सरकार बनाना विनिश्चित किया। संविधान के नेता श्री मेकडोनेल्ड ने कहा कि समस्त केन्द्र-विघटनकारी बलों पर नियंत्रण रखना चाहिये और इस कारण एक दृढ़ केन्द्र आवश्यक है। यदि राज्य के प्रारम्भिक काल में किसी राष्ट्र को इतनी राजनैतिक, आर्थिक तथा सामाजिक समस्याओं का सामना करना पड़े तो उसके लिये एक दृढ़ केन्द्र होना चाहिये जिससे कि शक्ति का समस्त भागों में विकिरण हो सके। केन्द्र को इतना शक्तिशाली नहीं होना चाहिये कि वह स्थानीय सरकारों की स्वायत्तता का अन्त कर दे। पर हमने केन्द्र में ऐसी किसी शक्ति का संचयन नहीं किया है जिससे राज्यों की स्वायत्तता का अन्त हो जाये। अतः इस दोषारोपण के लिये कि इस संविधान में केन्द्र को अधिक शक्तियां दी

गई हैं कोई आधार नहीं है। यह ठीक है कि 365, 371 और 324 जैसे अनुच्छेद एकाधिपति-शासनात्मक प्रतीत होते हैं पर अब आप उन भावनाओं और केन्द्र को दुर्बल बनाने वाले बलों की आंधी की ओर दृष्टि करेंगे जो लोकतंत्र के पदार्पण से चल उठी है तो आप देखेंगे कि राजनैतिक हित तथा विधि और व्यवस्था की सुरक्षा के लिये एक दृढ़ केन्द्र होना चाहिये जिससे कि राष्ट्र जीवित रह सके। संविधान में संशोधन करने के उपबन्ध है और यदि केन्द्र अधिक शक्तिशाली है तो हमें डरना नहीं चाहिये, क्योंकि जब राष्ट्र अपना पूर्ण स्वरूप प्राप्त कर लेगा और जब हम अपने पैरों पर खड़े होंगे तब हम संविधान का संशोधन कर सकते हैं और शक्तियों का सम विभाजन कर सकते हैं।

इन बातों को कह कर मैं अपने मित्रों को धन्यवाद देती हूं कि उन्होंने धैर्यपूर्वक मेरा भाषण सुना। हम सब इस संविधान के सफल बनाने की कामना करें और हम यह भावना ले कर घर जायें कि हमने अपने देश और जनता के प्रति अपना कर्तव्य-पालन किया।

***श्री गोकुलभाई दौलतराम भट्ट** (बम्बई स्टेट्स): माननीय सभापति, हमने जिस मसौदे को अब तैयार किया है और जिसको अब स्वीकार करने जा रहे हैं उस विधान के बारे में अगर हम कुछ बातें कहें तो उसके दो मतलब निकलते हैं। एक तो यह है कि हमारी खुद की कृति की हम प्रशंसा कर रहे हैं। और अगर उसकी बुराईयों को दिखलाने के लिये हम बैठें तो यह मतलब होगा कि हमने यह ऐसा क्या बनाया है कि जिसकी हम खुद बुराइयां कर रहे हैं। हमने जो विधान तैयार किया है उसमें काफी समय भी लगा है, शक्ति खर्च हुई है और सम्पति भी खर्च हुई है। इस विधान को तैयार करने में सिर्फ हमारी मसौदा कमेटी के सयाने सदस्यों को जैसा कि भाई कामथ बार-बार उन लोगों को कहा करते हैं और जो भाई दूसरों को सयाना कहते हैं वह खुद तो सयाना होना ही चाहिये, बल्कि सवाया श्याणा होना चाहिये तो उस मसौदा कमेटी के भाइयों ने जो मेहनत की, और सभापतिजी, आपने भी जिस सबूरी से काम लिया और हम लोगों ने भी बहुत धीरज से सुना और बैठे रहे, कोरम बनाने के लिये भी और हमारे सलाहकार श्रीयुत राव ने भी कुछ सलाह दी और उन्होंने भी बहुत कुछ मदद की और ऑफिस के कर्मचारियों ने भी जो दिक्कत उठाई है, वह कम नहीं है, तो इन सबों की मेहनत के फलस्वरूप आज हमारे सामने यह विधान आ रहा है और हम उसकी चर्चा कर रहे हैं कि हमने क्या अच्छा लड्डू बनाया है, कैसे अच्छी रोटी बनाई है। बनाने वाले तो पहला अनुभव करने वाले आदमी थे लेकिन दूसरों के नमूने को देखकर हमने उस रोटी को बहुत ही मजेदार गोल बनाने की कोशिश की। सेकने की भी कोशिश की, सेकी भी है और अच्छी सेकी है। अब उसमें गेहूं भी मिला है, चना भी मिला है, जो भी मिला है और शायद दूसरा जैसा आटा मिला वह भी मिलाया होगा। इस तरह से इस रोटी को हमने पकाई है और अब उसकी प्रशंसा कर रहे हैं, उसके बारे में हम बोल रहे हैं।

***श्री एस. नागप्पा** (मद्रास: जनरल): अब खाना शुरू करेंगे।

***श्री गोकुलभाई दौलतराम भट्ट:** खैर, मैं अपनी रोटी का दूसरों के पाउ बिसकुट वगैरह से 'मुकाबला नहीं करना चाहता और न इस बहस में उतरना चाहता

[श्री गोकुलभाई दौलतराम भट्ट]

हूं कि दूसरे देशों के विधानों के मुकाबले में हमारा विधान कैसा है। यह बात तब तक नहीं कही जा सकती है जब कि हम उस रोटी को खाने न लगें और खाने के बाद हज़्म करने न लगें। तब तक हमको उसमें से कितना तत्व मिलता है यह हम नहीं कह सकते। तो इसी तरह विधान के बारे में भी हम उस समय तक कुछ ज़्यादा न कहें यही ठीक रहेगा और इसी दृष्टि से मैं आज न तो प्रशंसा के शब्द कहना चाहता हूं और न इसमें किसी कमी के लिये कोई कटु शब्द ही कहना चाहता हूं।

पहले पहले जब यह मसौदा हमारे सामने आया था तब मैंने यह कहा था कि अलग अलग जगह के फूल यहां इकट्ठा किये गये हैं। कागज़ी फूल भी इकट्ठे किये गये हैं और उसमें बीच-बीच में कहीं गुलाब भी आ गया होगा, चमेली भी आ गई होगी। अलग-अलग तरह के फूल यहां आये हैं। अब जो हमारे सामने आज गुलदस्ता है वह गुलदस्ता हमने ही बनाया है और उसमें तरह-तरह की चीजें हमने रखी हैं और उन चीज़ों में कई खुशबुदार चीजें हैं और उनमें सुगन्ध भी है। लेकिन सब तरह की चीजों की जरूरत होती है क्योंकि हम कहते हैं कि पूरी पूरी सुगन्ध ही भर दी जाये तो आदमी का दिमाग चकरा जाता है, वह इतनी सुगन्ध बरदाश्त नहीं कर सकता। तो उस सुगन्ध की अतिशयता को मिटाने के लिये दूसरी चीज़ें भी रखी गई हैं।

अब अगर कोई कहे कि इतना लम्बा विधान 395 धाराओं का विधान नहीं बनाना चाहिये था और करीब 100 धाराओं में खत्म कर देना चाहिये था। यह हो सकता था लेकिन हमारे कई पंडित भाई हैं। एक तो पंडित नज़ीरुद्दीन जैसे भी पंडित हैं और भाई कामथ जैसे भी पंडित हैं जो अपने-अपने दिमाग लड़ाते हैं।

***श्री एच.वी. कामत** (सी.पी. और बरार: जनरल): मैं पंडित नहीं हूं।

***श्री गोकुलभाई दौलतराम भट्ट:** ठीक है, लेकिन आप गीता के अभ्यासी तो हैं ही और ईश्वर का स्मरण करने वाले भी हैं तो वे तो पंडित हैं ही। तो वह लोग कहते हैं कि इसमें यह कमी रह गई। यह सब कहा गया था नहीं तो हम इसको बहुत कुछ लचकदार बना लेते, जैसे मरोड़ना होता मरोड़ लेते। लेकिन उस मरोड़ने की इजाजत हर एक नहीं देता, हर एक को इसमें विश्वास नहीं होता है और कहते हैं कि कि इसमें यह अर्थ भी निकलता है, दूसरा अर्थ भी निकलता है और तीसरा अर्थ भी निकल आयेगा क्योंकि अदालत और वकीलों का सवाल है और वहां जाकर क्या जवाब देना होगा और जो कारोबार चलाने वाले लोग हैं उनको मुसीबत पेश न हो इसलिये इस विधान को इतना लम्बा बनाना पड़ा और इसमें इतना तफसील में जाना पड़ा।

तो मैं यह अर्ज कर रहा था कि यह विधान हमने कई जटिल समस्याओं को पार करके बनाया है। कभी-कभी ऐसा सन्देह होने लगा था कि कहीं इस पर बड़ा झगड़ा न चल पड़े जैसे कि भाषा के सवाल पर, देश के नाम के सवाल पर, जो अचल मिल्कियत है उसको किस तरह केन्द्र या प्रान्त जनता के लिये

ले सके इस सवाल पर। और इस तरह के दूसरे सवाल भी हमारे सामने आये थे जिनको हम लोगों ने अपनी अक्ल और होशियारी से तय किया और जो हमारे नेता थे उनके मार्ग प्रदर्शन से उन सवालों को तय किया और इन झगड़ों का निबटारा किया, समझौता किया। निबटारे से मेरा मतलब यह है कि जिन लोगों को भाषा के सम्बन्ध में कुछ विशेष कहना था, जिनका कुछ आग्रह था उनको पूरा सन्तोष तो नहीं हुआ होगा जैसे माननीय टंडनजी को इसमें कुछ न कुछ कमी रह गई है। लेकिन इस दुनिया में पूर्ण तो कोई चीज़ होती नहीं और पूर्ण बनाने के लिये हम कोशिश कर रहे हैं और जब पूर्ण बना लेंगे तो हमीं पूर्ण हो जावेंगे, कुछ रहेगा ही नहीं। यह उपनिषदों के वाक्य हैं, उसमें मैं नहीं जाना चाहता हूं। लेकिन मैं यह कहता हूं कि हमने आपस में बैठकर कई सवालों का समझौता कर लिया है और यह अच्छा ही हुआ है और इतना समय लगाने के बाद भी हम निबटारा नहीं करते तो लोग हमारा उपहास करते, हंसी उड़ाते और ठठ्ठा करते।

प्रस्तावना में मेरी अगर चलती तो मैं ज़रूर कहता कि इसमें महात्मा गांधीजी का और उन शहीदों का नाम जरूर आता कि जिनके जरिये हमने यह सब कुछ हासिल किया है। लेकिन हमारे नेता पंडित जवाहर लाल जी ने और हमारे बुजुर्ग सरदार साहब ने जैसी हमें सलाह दी हमने उसे शान्ति से माना और हम यह कहते हैं कि अगरचे इस विधान में महात्माजी का नाम नहीं है, इस विधान में उन शहीदों के नाम नहीं हैं जिन शहीदों ने सैकड़ों वर्षों से कुरबानी करके हमको यह मुकम्मिल आजादी प्राप्त कराई है तो भी हम आज उनको याद करते हैं और हम कहते हैं कि कि उनकी बदौलत ही हम आज यहां दिखाई दे रहे हैं। इस आजादी के वातावरण में, इस आबोहवा में आज हम यहां बैठे हैं और गुजारा कर रहे हैं।

अब इस विधान में महात्माजी की विचार शैली कितनी आई है और कहां तक उनकी विचारधारा ने हमें प्रेरणा दी है इस सम्बन्ध में मेरे अल्प मत में कह कहता हूं कि अच्छा होता अगर पंचायतों के ज़रिये हमारा काम आगे बढ़ता। मैं इस प्रश्न को बहुत ही जरूरी समझता हूं और जब जब मुझे बोलने का मौका मिला है यहां और दूसरी जगहों पर भी मैंने पंचायत की संस्था के बारे में बहुत कुछ आग्रह रखा है। यह ठीक है कि हमने बालिग मताधिकार के लिये कोशिश की, कशमकश की और हमने यह चाहा कि बालिग मताधिकार के आधार पर ही चुनाव होना चाहिये। जब हम लोग इस मंजिल पर पहुंचे हैं। एक मर्तबा हमने यह कहा था कि हमारा जो राष्ट्र प्रमुख हो वह भी बालिग मताधिकार पर चुना जायेगा। हमने एक मसौदे से वह मंजूर भी कर लिया था। लेकिन बाद में हमने सोचा कि यह मुमकिन नहीं है। कि एक तरफ तो बड़ा वजीर बनेगा, प्रधान मंत्री बनेगा, वह और दूसरी तरफ से जो उस राष्ट्र का प्रमुख है वह दोनों ही एक तरह से चुने हुये हों और शायद उनमें आपस में झगड़ा भी चले तो हमने उसकी वास्तविकता को स्वीकार किया और व्यावहारिक रूप से क्या हो सकता था उसका हल निकाला और कहा कि उनको तो इस रीति से नहीं चुना जायेगा लेकिन हमारे जो दूसरे प्रतिनिधि केन्द्र में होंगे और दूसरे सूबों की धारा सभाओं में रहेंगे वे लोग तो बालिग मताधिकार पर चुने हुये होंगे। मुझे संशय है कि हम यह कहां तक ठीक कर पायेंगे और कहां तक इसको अमल में ला सकेंगे। लेकिन एक मर्तबा अनुभव तो कर लेना चाहिये, तजुर्बा कर लेना चाहिये। आगे हम कुछ परिवर्तन कर सकते हैं लेकिन एक दफा तजुर्बा करने के बाद और शायद तब हमें इस नतीजे पर

[श्री गोकुलभाई दौलतराम भट्ट]

पहुंचना पड़ेगा कि हमारा जो इलेक्टोरेट हो वह गांव की पंचायत होनी चाहिये और उनके जरिये जो प्रतिनिधि चुने जायें वे हमारे लोकप्रिय प्रतिनिधि माने जाने चाहिये। अब इस सवाल को मैं बहुत ज्यादा तफसील में नहीं लेना चाहता क्योंकि मुझे चन्द मिनटों में कुछ बातें आप से कहनी हैं।

एक सवाल यहां भाषा के बारे में आया। सेठ गोविन्ददासजी ने कहा कि अगर हिन्दी भाषा में विधान बनता और अगर एक साल और लग जाता तो उसमें कोई बेजा बात नहीं थी। मैं उनके भाषण का सार कह रहा हूं। हो सकता है कि उनकी भावना यह हो और शायद यह अच्छा भी होता कि हिन्दी में हमारा विधान बन गया होता। लेकिन इस काम के लिये हम एक साल के लिये रुक जायें यह मैं मानता हूं कि हमारी होशियारी का नमूना नहीं होगा। हम जिन संयोगों में बैठे हैं उन संयोगों में यह बना है और उससे ज्यादा अच्छा इन संयोगों में नहीं हो सकता था। और यदि हम ज्यादा समय लगावें तो लोगों को यह मौका देना होगा वह कहेंगे कि हम लोग ख्वामख्वाह बेठे हैं और पैसा खर्च कर रहे हैं, पैसा जेब में डाल रहे हैं और हमारा मजाक उड़ा रहे हैं और जनतन्त्र के नाम पर वहां बैठे हैं। हम अपने ऊपर यह आरोप लगवाना नहीं चाहते थे और यह ठीक हुआ है कि अब हम विधान को जल्दी तय कर रहे हैं।

भाषा के बारे में जहां तक प्रादेशिक भाषाओं का सवाल है मुझे एक बहुत नम्र निवेदन यह करना है। उस रोज मैं हाजिर नहीं था जब यह सवाल आया था। लेकिन मेरे बुजुर्ग ने और दूसरे भाईयों ने यह कहा कि इस सवाल को आप न छेड़िये। लेकिन मैं यह कहता हूं कि गुजराती, मराठी आदि जो भाषायें हैं वे सब प्रादेशिक भाषायें बन सकती हैं तो राजस्थानी भाषा भी वैसी है और वह करीब डेढ़ करोड़ जनता की भाषा है। और अलग-अलग उसमें बोलियां हैं, लेकिन इसका इतिहास कोई आज का नहीं है। आज से नहीं इस डिंगल भाषा और राजस्थानी भाषा का चलन है। मैं यह भी जानता हूं कि अभी भी राजा जो हैं, वे उसे अपना लेते हैं, या जब वह जागीरदार भाइयों को लिखवाते हैं, तब वह राजस्थानी में लिखवाते हैं। इस रीति से इस भाषा के पक्ष में कई नमूने हैं। तो इस राजस्थायी या प्रादेशिक भाषा को भी स्थान दिया जाना चाहिये, ऐसा मेरा नम्र अभिप्राय है, और अगर कभी भी मौका आये, तब हमारे भाई इस पर विचार जरूर करें। और मेरा नम्र निवेदन है और जितनी मेरी बोलने की ताकत है मैं कहता हूं कि इसको मान्यता मिलनी चाहिये। मैं इसके पक्ष में कोई ग्रिर्यसन का प्रमाण नहीं देना चाहता हूं, वह बहुत लम्बा हो जायेगा। इतना में जरूर कहना चाहता हूं कि इस भाषा को प्रादेशिक भाषाओं में भी स्थान मिलना चाहिये।

कई मित्रों ने यह कहा कि केन्द्र को सब सौंप दिया गया है। मैं यह मानता हूं कि समय तो ऐसा है कि अभी फिलहाल 10-15 साल तक जब तक हम केन्द्र के आधीन सब चीजों को नहीं सौंपेंगे, तब तक हम नई चीज अच्छे तरीके से नहीं बना पायेंगे। जो नवनिर्माण हम करना चाहते हैं वह अगर आप शृंखलाबद्ध केन्द्र के नीचे रह कर नहीं करेंगे, तब तक यह चीज चलने वाली नहीं है ऐसा

मेरा नम्र निवेदन है, और यही एक वास्तविक चीज है। वैसे स्वप्नलोक में विचरना दूसरी बात है। उससे हम कहीं पहुंचने वाले नहीं हैं। हमें तो देखना है कि जमीन कहां है जमीन कैसी है उसमें कितनी पथरीली जमीन है, उसमें आप कहां बाग लगाना चाहते हैं। जैसी जमीन है, जैसे बीज हों उसी के मुवाफिक और जितना पानी हमारे पास हो उतना ही हमें काम करना होगा। तो आज जैसा हमारा हाल है उसको देखते हुए हमें केन्द्र के नीचे रहना ही होगा। मेरे मित्र हनुमंत अय्यर ने कल कहा था। बीच में यह बात निकली थी कि जो रियासती संघ बने हैं, उनके ऊपर केन्द्र का नियन्त्रण ज्यादा रहेगा और दस साल केन्द्र का नियंत्रण रहेगा। मैं इसका पूरा इतिहास देना नहीं चाहता हूं लेकिन जब राजस्थान बना, उस समय जो पहले पहल बात हमारे तथा स्टेट मिनिस्टरी के बीच में चल रही थी तो हमारे भाइयों ने, जिसमें मैं भी एक था, यह मंजूर किया था कि नियंत्रण केन्द्र का रखना ही होगा। राजस्थान की परिस्थिति कुछ विचित्र है, उस विचित्र परिस्थिति में हमने यह ठीक समझा कि केन्द्र के नियन्त्रण में रहकर हम कुछ कर सकेंगे और यही हल इसके बाद फिर दूसरी रियासतों के लिये भी लागू है। और आज हमारे सामने इस विधान में भी वही चीज आ गई। उसमें यह दिया हुआ है कि जो जो संघ और जो जो रियासती संघ बनाये जायें तो केन्द्र को यह अधिकार दिया गया है कि जिन पर नियन्त्रण नहीं रहे उन पर से यह नियन्त्रण हट जायेगा। इसमें घबराने की कोई चीज नहीं है और मैं इसका एक तौर से स्वागत करता हूं। और मैंने उसमें एक प्रकार से हिस्सा भी लिया था।

श्रीयुत के.टी. शाह ने कल कहा था कि नागरिक अधिकारों के बारे में इतनी पाबन्दियां लगाई गई हैं, और वह आज हाज़िर होते, हां, हाजिर तो हैं, मैं पूछ सकता हूं कि कौन-सा ऐसा देश है जहां पब्लिक इन्ट्रेस्ट और मोरेलिटी के लिए कोई पाबन्दी न लगाई गई हो? कौन-सा ऐसा मुल्क है जहां आप किसी न किसी तरीके से और एक ऐसे संयम में रखने के लिये, संयत भाषा इस्तेमाल करने के लिये पाबन्दी की जरूरत हर जगह होती है और उसकी जरूरत सिर्फ इतनी ही है कि जिससे सामाजिक व्यवस्था में अंधेर न हो, कोई गड़बड़ न हो जाये, इसके सिवा इसका कोई मतलब नहीं है। हम देखते हैं कि हमारे जो नागरिक अधिकार हैं जिन अधिकारों का पालन और उपभोग जनता करेगी एक अदालत की मार्फत भी करवाया जायेगा वह अधिकार इतने वसीय हैं, इतने व्यापक हैं, और मैं तो मानता हूं कि हर एक को इस पर संतोष होना चाहिये। मैं अब जरा आगे जाता हूं। अब मुझे बहुत जल्द जल्द कहना पड़ेगा। एक बड़ी चीज जो हमारे पास आई है, वह यह है। पहले तो राजाओं ने भारतीय संघ में तीन ही विषयों में शामिल होने को कबूल किया। उसके बाद वह धीरे-धीरे सब एक-एक करके हमारे साथ मिल गये। यह सब हमारे बुजुर्ग सरदार साहब के पुण्य से उनकी अक्ल और होशियारी से उन लोगों को समझाया और वह अब हमारे साथ हो गये हैं। अलग-अलग विधान सभायें, अलग-अलग रियासती संघों में बैठने के बावजूद अब हमने यह तय किया कि उन रियासती संघों का विधान भी उसी के साथ शामिल होगा और सातवें पार्ट में हमने एक मामूली से परिवर्तन के साथ जो प्रान्त का विधान है, वह रियासती संघों के लिये लागू कर दिया। यह मामूली चीज नहीं है। मैं अब इस विषय में कुछ ज्यादा कहूं, यह भी ठीक नहीं है। लेकिन मैं यह कहता हूं कि सारी दुनियां को यह कहना पड़ेगा कि 100,200 साल में जो

[श्री गोकुलभाई दौलतराम भट्ट]

चीज हिन्दुस्तान में नहीं हो पाई, उसे हमारे देश के नेताओं ने करके दिखा दिया है। जो छह सौ अलग-अलग रियासतें थीं वह एक में हो गई हैं। ऐसे हमारे सरदार साहब हैं उनके लिये क्या कहूं हम सब उनकी प्रशंसा करते हैं। उन्होंने रियासती संघों के बनाने में बहुत ही तकेदारी और सावधानी के साथ काम किया है। राजस्थान का मामला उन्होंने बड़ी अच्छी तरह से तय किया। और सिरोही का मसला परसों आया था और सिरोही की मांग राजस्थान की मांग क्या है वह भी मैंने आपको और कुछ मेरे मित्रों ने भी उसके बारे में कहा है। मैंने भी बराबर दूसरी जगह कहा है कि भाई यह सिरोही राजस्थान में रहे लेकिन मैं एक चीज़ और मानने वाला हूं कि हम सारी परिस्थित सरदार साहिब के सामने रख कर उनके ही जिम्मे सब सिपुर्द करना चाहते हैं। इसमें मैं अक्लमन्दी समझता हूं और यह वास्तविकता भी है। चूंकि इस बुजुर्ग ने, इस हमारे सरदार ने ऐसे मसले हल किये हैं जो मसले दूसरे कोई नहीं हल कर सकते थे तो यह सिरोही का मसला भी वही ही हल करें और हमारे राजस्थान के मित्र उनसे मिलकर सारी बात उनके सामने रख दें। पहले एक मौका था जब कि यह सिरोही बम्बई में चला गया मालूम होता था। अब कुछ हिस्सा बम्बई में जा रहा है, उसके बारे में हम सरदार साहेब से मिलें और सरदार साहेब से कहें कि क्या हमारी भावना है, क्या राजस्थान की भावना है, और क्या सिरोही की भावना है। उनसे मिलकर मिन्नत करें और मुझे विश्वास है कि उनके फैसले से सबको सन्तोष होगा। उन्होंने सबको संतोष दिया है और हमें आशा है कि हमें भी वह संतोष देंगे।

इस विधान की दूसरी बातों पर अब मैं कुछ नहीं कहूंगा, क्योंकि समय नहीं है। यह विधान जैसा मैंने पहले कहा था, ऐसा बना है कि जिसमें प्रेजीडेन्ट भी खुद परिवर्तन कर सकेंगे और हम खुद भी उसमें संशोधन करवा सकेंगे। इस प्रकार का जो हमारा विधान है मैं आशा करता हूं कि आज विधान की जो भावना है उसका उपयोग देश के नवनिर्माण में बहुत ही ठीक होगा। मैं अन्त में फिर से मसविदा कमेटी तथा दूसरे सब को जिन्होंने इसके बनाने में परिश्रम किया है उन सबको धन्यवाद देता हूं।

***पंडित लक्ष्मीकान्त मैत्र** (पश्चिमी बंगाल: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं यह स्पष्ट स्वीकार करता हूं कि आज जो मैं भाषण दे रहा हूं वह इस कारण नहीं है कि मुझे कोई बात रखनी है। क्योंकि पहली बात यह है वह स्थिति नहीं है कि वाद विवाद के या किसी अनुच्छेद के सम्बन्ध में कोई बात रखी जाये और दूसरी बात यह है कि ऐसा करने की मेरी तबियत नहीं है। पर श्रीमान, मैं उस मानव दुर्बलता का सरलता से शिकार हो जाने से न बच सका जो यह है कि आज के दिन, जो भारत के इतिहास में एक चिर स्मरणीय दिन रहेगा, मैं भी कुछ कहकर सहयोग दूं। इस देश के एक ऐसे तुच्छ सेवक के रूप में जितने संसदीय या विधान सम्बन्धी कार्यों में अपने जीवन का अधिकांश भाग लगाया है मैं इस दिवस को अपने जीवन का सबसे महान गौरवमय दिवस समझता हूं कि आज यहां खड़े होकर मैं उस प्रस्ताव में अपना सहयोग दे सका जो स्वतंत्र भारत के इस संविधान को पारित करने के लिये है। अध्यक्ष महोदय किसी देश में किसी विरले मनुष्य के भाग में यह बदा होता है कि वह अपने जीवनकाल में यह सुयोग

प्राप्त कर सके। और फिर भारत में तो इस समय से पिछले हजार वर्षों तक मैं यह कल्पना नहीं कर सकता कि ऐसा अवसर कभी आया हो। यह एक चिर स्मरणीय अवसर है; महत्वपूर्ण अवसर है, गंभीर अवसर है। श्रीमान, आज मैं ज्योंही बोलने के लिये खड़ा होता हूं तो कटु तथा मर्मभेदी संस्मरणों का समूह मेरे मस्तिष्क के सामने प्रस्तुत हो जाता है हमारे सामने इस देश की स्वतन्त्रता के लिए दो मानव पीढ़ियों ने युद्ध किया और खून बहाया। संसदीय क्षेत्र में हमारे अनेक यशस्वी पुत्रों ने सुखद आशा में बंजर भूमि को सींचा कि किसी भी साधन में कुछ परिवर्त्तन करके उन लोगों से कुछ न कुछ उन्नति प्राप्त कर सकें जिनके हाथ में इस देश का भाग्य था। वे लोग अब नहीं रहे। उन्होंने जो पौधे लगाये उनको पूर्ण रूप से फलते न देख सके। उनका कार्यभार हम पर आया। केवल विधान या संसदीय क्षेत्र में में नहीं वरन् प्रत्येक अन्य महत्वपूर्ण क्षेत्र में हमारे लोगों ने देश की स्वतन्त्रता के लिये भीषण कार्य किये। हममें से कुछ लोग अपने स्वप्नों को साकार देखने के लिये बचे रहे। कुछ लोग चल बसे। मैं विस्मृति में विश्वास नहीं करता हूं और एक कृतज्ञ राष्ट्र को ऐसे अवसर पर सदैव यह स्मरण रखना चाहिये कि यदि वे न होते तो आज संविधान के निर्माण करने जैसे कार्य से हमारा कोई सम्बन्ध नहीं हो सकता था। *(वाह, वाह)* अध्यक्ष महोदय, मैं यह अपना प्रथम कर्तव्य समझता हूं कि आज उन महान देशभक्त पुत्रों के प्रति अपनी तुच्छ श्रद्धांजलि भेंट करूं।

***एक माननीय सदस्यः** पुत्रियों के प्रति भी।

***पंडित लक्ष्मीकान्त मैत्रः** पुत्रों के अन्तर्गत पुत्रियां आ जाती हैं—उन सब पुत्र पुत्रियों, माता, पिता, भाई और बहिनों को श्रद्धांजलि भेंट करूं जिन्होंने इस स्वाधीन राष्ट्र के निर्माण में सहयोग दिया। जिस मसौदा समिति में कुछ हमारे बड़े पक्के तथा परखे हुये मित्र हैं उस मसौदा समिति द्वारा की गई सेवाओं के प्रति इस सामूहिक यशोगान में मैं आज सहर्ष सम्मिलित होता हूं। उनकी इस सफलता पर मैं उनको बधाई देता हूं। संयुक्त सचिव श्री मुकर्जी तथा अन्य कर्मचारियों द्वारा किये गये कार्यों के प्रति अपनी प्रशंसा को भी मैं अभिलेख बद्ध करना चाहता हूं जिन्होंने हमारे साथ कार्य किया और उनके सहयोग से हम यह संविधान बना सके। प्रसिद्ध तथा परिचित व्यक्तियों की प्रशंसा करते समय हम इन लोगों को न भूलें। 'जो खड़े रहते हैं और प्रतीक्षा करते रहते हैं वे भी सेवा करते हैं।' अध्यक्ष महोदय, इन सब बातों से परे क्या मैं एक अपनी तान छेड़ सकता हूं और मुझे विश्वास है कि इस तान में मैं जो कुछ कहूंगा उसकी गूंज यहां उपस्थित प्रत्येक माननीय सदस्य के हृदय में होगी और वह यह है कि यदि सम्पूर्ण राष्ट्र नहीं तो यह सम्पूर्ण सभा, जिस प्रशंसनीय रीति से आपने इस महान सभा की कार्रवाइयों का विनियमन तथा संचालन किया उसके लिये अध्यक्ष महोदय, आप ही कृतज्ञ हैं। हममें से बहुतों का यद्यपि मैं उनमें न था, यह खयाल था कि जिस क्षेत्र में आप को यकायक सेवा करने के लिये आमंत्रित किया था उसका अनुभव न होने के कारण आपकी स्थिति संदेहजनक थी। अध्यक्ष महोदय, मुझे आश्चर्य है और जब मैं यह कहता हूं तो आपकी कोई खुशामद नहीं कर रहा हूं कि मुझे आश्चर्य है कि आपने किस प्रकार इतनी प्रशंसापूर्वक तथा नीति कौशल के साथ इस महान सभा के विचार विमर्शों का नियंत्रण किया। आपने किसी को शिकायत का अवसर

[पंडित लक्ष्मीकान्त मैत्र]

नहीं दिया आपने कभी वाद विवाद को रोका नहीं आपने प्रत्येक व्यक्ति को पूर्ण अवसर दिया। जिन लोगों में बहुत जोश भरा हुआ था उनको जोश निकाल देने के लिये स्वतन्त्र अवसर दिया जिनको व्यर्थ बकवास करने में विशेष आनन्द आता था उनको जी भर के संतोष कर लेने का अवसर दिया। मैं जानता हूं और कई सदस्य जानते हैं कि आसन पर चुपचाप बैठे हुए आपने इस सभा में कई ऐसी बातों को देखा जिनको कदाचित् आप पसन्द नहीं करते पर फिर भी आप अपना हाथ खींचे रहे। हम इस बात की प्रशंसा करते हैं और एक तुच्छ संसदीय प्रक्रिया वेत्ता होने के नाते जिस बात की मैं सबसे अधिक प्रशंसा करता हूं वह यह है कि यद्यपि आसन पर बैठे हुये ऐसे अनेक अवसर आये जब आपने हस्तक्षेप करना उचित समझा। जब आपने यह देखा कि सभा गलत तथा त्रुटिपूर्ण कदम उठा रही है तो आपने उसे रोका, आपने कहा कि इस विषय में जल्दी न करें बल्कि सोच विचार कर धीरे-धीरे आगे बढ़ें और मैं जानता हूं कि ऐसे प्रत्येक अवसर पर आपकी मंत्रणा से यथार्थ लाभ हुआ। यह एक ऐसी बात है जिसे यह सभा कभी नहीं भूलेगी। कदाचित् यह उल्लेखनीय है कि संविधान सभा के सदस्यों का भी इस श्रेय में भाग है इस देश में वे भी इस श्रेय के पात्र हैं। सदस्यों को दिल्ली बुलाया जाता है, उनको यहां महीनों ठहरना पड़ता है और कठिन परिस्थितियों में उन्हें अपने निजी व्यापारों की पूर्ण अपेक्षा करनी पड़ती है। श्रीमान, थोथी परम्परा के प्रति सम्मान के लिये मैं यह सब नहीं कहता हूं। मैं शुद्ध हृदय से विश्वास करता हूं कि केवल इस संयुक्त उद्यम के कारण, उन समस्त सम्बद्ध व्यक्तियों के, जिन के मुखिया श्रीमान् आप हैं, सामूहिक उद्यम के कारण हम इस महान कार्य में सफलता प्राप्त कर सके।

अब मैं संविधान सम्बन्धी एक दो बातों का निर्देश करूंगा। यहां तथा अन्यत्र यह आलोचना लगातार होती रही है कि यह संविधान उन सब प्रकार की व्यवस्थाओं की खिचड़ी है जिनका प्रचलन अन्य देशों में है। ठीक है। सैद्धान्तिक रूप ये यह ठीक है। कुछ मात्रा में सब व्यवस्थाओं की चुनी चुनी बातें इसमें हैं—इसमें कोई सन्देह नहीं, हम इसे न रोक सके। इस देश में इसे कौन रोक सकता था? इस देश में किस व्यक्ति को एक स्वतंत्र देश का अनुभव तथा उसकी परम्पराओं का ज्ञान है या किसने स्वतंत्रता का स्वाद चखा है? स्वतंत्रता की स्वच्छन्द वायु का न हमने सेवन किया न सेवन कर सके। हम अपनी राष्ट्रीय तथा राजनैतिक परम्पराओं में प्रगति नहीं कर सके हमें अपने प्राचीन शास्त्रों तथा प्राचीन ज्ञान का ही सहारा लेना पड़ा। अतः अन्य देशों के संविधानों में प्रमाणित ऐतिहासिक शिक्षाओं को अस्वीकार न करने में मेरी सम्मति से हमने ठीक-ठीक कार्य किया है। यह देख कर कि हमारे लिये क्या बात सबसे अधिक उपयुक्त होगी, राष्ट्र की विचारधारा के लिये क्या बात सबसे अधिक उपयुक्त होगी हमें उन बातों को 'छांट छांट कर चुनने' की नीति का पालन करना पड़ा और मुझे पूरा विश्वास है कि ये जो बातें चुनी गई हैं उनके लिये हमें खेद प्रकट करने की आवश्यकता नहीं होगी।

इस संविधान के प्रति एक और आलोचना यह है कि यह एक विशाल लेख्य है। व्यर्थ विषय की, अनावश्यक विषय की इसमें भरमार है। इस आलोचना में

भी शायद कुछ सच्चाई है। परन्तु क्या इस बात पर भी विचार किया गया है कि आप 34 करोड़ लोगों के लिये संविधान बना रहे हैं? आप अपने राज्य और उसकी जनता के परिमाण या आकार की ओर देखिये। क्या इसकी समानता संसार में कहीं है? क्या संसार के किसी अन्य देश में, किसी अन्य राज्य में इतनी जटिल तथा इतनी विभिन्न समस्याओं का ऐसा बाहुल्य है जैसा हमारे यहां है? अत: वस्तुस्थिति के अनुसार यह अनिवार्य था और उसके लिये मैं कोई क्षमा प्रार्थना नहीं करता हूं। मैं यह नहीं कहता हूं कि इस संविधान में सर्वोच्च ज्ञान, सर्वोच्च राजनैतिक ज्ञान निहित है। न मैं यह कहता हूं न इस बात का दावा करता हूं। आप भी ऐसा दावा नहीं करते हैं, कोई व्यक्ति भी ऐसा दावा नहीं करता है। न मसौदा समिति न इस सभा का कोई सदस्य इस बात का दावा करता है कि यह संविधान पूर्ण है और इसका सीधा सादा कारण यह है कि पूर्ण होना मनुष्य मात्र का लक्षण नहीं है और यह आवश्यक है कि मानव व्यवस्था अपूर्ण हो। और समाज भी तो स्थिर नहीं है। हम एक गतिमान शक्तिशाली युग में होकर गुजर रहे हैं, शक्तिशाली बल अपनी क्रियाओं में संलग्न है। आज हमने जो व्यवस्था की है दो साल आगे सम्भव हो सकता है कि उसे रद्द करना पड़े, यह कोई नहीं जानता। अत: हमें इसे काल की कसौटी पर रखना चाहिये। हमें यह देखना चाहिये कि यह संविधान किस प्रकार क्रियान्वित होता है। भावी विधि निर्माताओं को, आगे आने वाली सन्तति को, जो हमारे बाद यहां आते हैं उनको यह पूर्ण अधिकार होगा कि वे परिवर्तनों को करें जो उनके समय की आवश्यकताओं के अनुसार न्याययुक्त हों।

यह कहा गया है कि इस संविधान को निर्बन्धित उपबन्धों द्वारा जकड़ दिया गया है और मूलाधिकार जो एक हाथ से दिये गये हैं उनको दूसरे हाथ से छीन लिया गया है। उस संविधान की आलोचना करने के उत्साह में जो हमारे ही हाथों द्वारा बनाया गया है क्या यह विचार किया गया है कि हमने कितना अधिकार प्राप्त किया है? आइये, हम इस बात पर विचार करें कि मूलाधिकारों के रूप में इस संविधान में हमने क्या क्या उपबन्धित किया है। बहुत से मूलाधिकार न्याय्य हैं। हमें यह बात नहीं भुला देनी चाहिये। अन्य मूलाधिकारों के साथ-साथ हमने भाषण, विचार, कर्म, सन्था तथा उन सब बातों के स्वातन्त्र्य का उपबन्ध किया है जो इस संसार में ज्ञानमय तथा सभ्य समागम के लिये आवश्यक हैं। इसमें सन्देह नहीं कि इनको कुछ निर्बन्धनों द्वारा जकड़ना होगा अन्यथा स्वयं स्वातन्त्र्य पतित होकर लम्पटता का रूप ग्रहण कर लेगा। स्वातंत्र्य नाममात्र को भी न रहेगा। उस महान कवि की इस प्रसिद्ध पंक्ति को याद रखिये 'मुझे तो अभियंत्रित स्वातंत्र्य परेशान करता है।' अन्य व्यक्तियों को नियंत्रित स्वातंत्र्य परेशान करता है। परन्तु राज्य की क्षेम के लिये तथा स्वातंत्र्य-नागरिक स्वातंत्र्य के महानतर तथा पूर्णतर उपभोग के लिये यह सत्य है कि ये निर्बन्ध चाहे कितने ही लोक विरुद्ध प्रतीत हों पर हैं आवश्यक।

श्रीमान, अस्पृश्यता के कंलक को हमने इस भूभाग से पूर्णतया मिटा दिया है। लिखित-विधि-उपबन्धों द्वारा हमने—मैं आशा करता हूं कि सदैव के लिये उन अवरोधों को चकनाचूर कर दिया जो मनुष्य मनुष्य में परस्पर विभेद उत्पन्न करते थे। क्या यह एक तुच्छ सफलता है? पृथकवाद को इस देश से हमने पूर्णतया निकाल दिया। पृथक निर्वाचक मंडलों को हमने मिटा दिया। यथार्थत: पिछड़े हुये वर्गों के

[पंडित लक्ष्मीकान्त मैत्र]

लिये रक्षण के सिवा जो इस समय नितान्त आवश्यक है और रक्षणों को हमने मिटा दिया। मानव में मानवता विकसित करने के हेतु प्रगति तथा विस्तार के लिये समान अवसरों को प्रस्तुत करने का हमने प्रयास किया है। यह सब हमने किया है। क्या यह तुच्छ कोटि की सफलता है? भाषा, लिपि, सभ्यता और उन सब बातों का, जिस सम्प्रदाय का कोई विशिष्ट भाग अपने लिये सुरक्षित रखना चाहता है, रक्षणाधिकार इस देश के लिये हमने रखा है। ये हमारी कुछ ठोस सफलतायें हैं। इन सबसे महान बात यह है कि वयस्क मताधिकार मंजूर करके इस देश के शासन में उन लोगों को प्रधानता दी गई है जो अब तक उपेक्षित तथा पशुओं से भी निम्न स्तर के समझे जाते थे। मैं देखता हूं कि मेरे माननीय मित्र श्री कामत् हंस रहे हैं। मैं यह नहीं जानता हूं कि वे मेरी इस बात के समर्थन में हंस रहे है या विरोध में।

***श्री एच.वी. कामतः** मैं आपकी बातों पर नहीं हंस रहा था। मैं आपसे सहमत हूं।

***पंडित लक्ष्मीकान्त मैत्रः** आपको धन्यवाद है। कम से कम एक बार तो मेरे माननीय मित्र मुझसे सहमत हुये। अध्यक्ष महोदय, मैं इस सभा से और इस सभा के द्वारा समस्त देश से यह पूछ रहा था कि वे इस बात पर विचार करें कि हमने इस देश में कितना क्रान्तिकारी परिवर्तन किया है। मैं उनसे निवेदन करता हूं कि वे इस देश में पूर्णरूप से वयस्क मताधिकार की जटिलताओं को समझें।

पर हमारे निन्दक यह कहेंगे कि हमने नागरिक स्वातंत्र्य का नाश कर दिया। हां, जहां तक मानव द्वारा संभव हो सकता है। हमने स्वातन्त्र्य को लम्पटता में पतित होने की समस्त सम्भावनाओं का नाश कर दिया है। यह सत्य है। मेरी तुच्छ सम्मति के अनुसार कम से कम संक्रान्ति काल के लिये तो ये निर्बन्धन आवश्यक हैं। ब्रिटिश शक्ति के यकायक हट जाने के बाद जो यह नहीं देखता कि वातावरण क्या हो रहा है, जो यह नहीं देखता कि अहिंसा और स्वेच्छाचारिता बढ़ती जा रही है उसकी नज़र कमजोर है। इन शक्तियों का प्रयोग कौन करेगा? कोई विदेशी तो इनका प्रयोग करेंगे ही नहीं, इनका प्रयोग करेंगे स्वयं हमारे निर्वाचित प्रतिनिधि—वे लोक–प्रतिनिधि जिनका निर्वाचन सर्वसाधारण जनता द्वारा होगा। यह तथ्य भली प्रकार विचारणीय है। मेरी यह उत्कट आशा है—केवल आशा ही नहीं मुझे दृढ़ विश्वास है कि इन विशिष्ट रक्षित शक्तियों का बहुधा प्रयोग नहीं होगा। शायद वे एक कोने में पड़ी रहें। मुझे पूर्ण आशा है कि यदि हम केवल अपने उत्तरदायित्व को समझ लें तो अपने पसीने से कमाई हुई स्वतंत्रता की रक्षा के लिये जो हथियार हमने छलपूर्वक बनाये हैं उन पर हमारे शस्त्रागार में जंग और धूल चढ़ती रहेगी और उनका प्रयोग नहीं होगा। मैं उस लोकतंत्र को नहीं समझ पाता हूं कि जिस में जनता के लिये केवल समस्त अधिकार तथा विशेषाधिकार हों और उनके एवज में राज्य के प्रति कोई आभार न हों। मैं देखता हूं कि इस बात में सार्वजनिक विश्वास है कि साधारण व्यक्ति केवल लेने में विश्वास करता है देने में नहीं। लोकतंत्र की इस मिथ्या धारणा से या मैं यह कहूंगा कि इस पवित्र पद को इस भ्रष्ट प्रयोग से बचाना चाहिये, और जब तब इसे बचाया नहीं जायेगा और जब

तक वह लोग जिन पर इस लोकतंत्र को कार्यान्वित करने का भार है जनता को इसे भली प्रकार से समझा नहीं देंगे और इसके अनुसार आचरण करना नहीं बता देंगे तब तक यह संविधान व्यर्थ ही रहेगा। क्योंकि मैं तो इस बात में विश्वास नहीं करता हूं कि किसी संविधान की अच्छाई और खूबी केवल उसके अनोखे मसौदा-लेखन में है या उन उपबन्धों में है जिनको आप उसमें निहित करते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि अपने रूप में वे महत्वपूर्ण हैं। पर किसी देश में लोकतंत्र की सफलता समस्त सम्बद्ध व्यक्तियों के संयुक्त तथा सामूहिक प्रयत्न पर निर्भर करती है। सर्वप्रथम यह कि इस संविधान में जो उपबंध आपने निहित किये हैं उनका शब्द और भाव दोनों रूपों में परिपालन होना चाहिये बल्कि शब्द रूप से भावरूप में अधिक। संसार में कोई भी मसौदा लेखक संविधान का इतने पूर्ण रूप में मसौदा नहीं बना सकता कि इन सब सामाजिक तथा राजनैतिक दोषों का एक दिन में परिहार हो जाये जिनके अधीन व्यक्ति है। कोई भी मोची संसार में एक ऐसा जूते का जोड़ा नहीं बना सकता जिसे पहन कर कोई लंगड़ा आदमी अच्छी तरह से शीघ्र चल सके। संसार में कोई भी चश्मे वाला ऐसा चश्मे का शीशा नहीं बना सकता जिससे अंधे या धुंधे भी साफ देख सकें। कोई भी दर्जी किसी कुरूप व्यक्ति को सुरूपवान तथा सुन्दर नहीं बना सकता। इसलिये मैं कहता हूं कि इस संविधान की सफलता या असफलता उन लोगों के हाथों में होगी जो इसे कार्यान्वित करेंगे और अन्ततः उन पर ही सफलता या असफलता निर्भर है। इसीलिये मैंने यह कहा था कि यह एक स्मरणीय अवसर है, परम हर्ष का अवसर है, कदाचित उन्नति और प्रशंसा का अवसर भी है परन्तु सावधान रहने का अवसर अवश्य है। यह आत्म-विश्लेषण तथा आत्म-परीक्षण का अवसर है। हमें यह देखना है कि यदि हम उन सब उपबन्धों का परिपालन करना चाहते हैं जिनकी हमने इस संविधान में व्यवस्था की है, यदि जो सफलता हम प्राप्त करना चाहते हैं जिनकी हमने इस संविधान में व्यवस्था की है, यदि जो सफलता हम प्राप्त करना चाहते हैं उसे प्राप्त करना है तो उसके लिये वातावरण बनाना हमें अभी यहीं से आरम्भ कर देना चाहिये। इस देश में असाम्प्रदायिक लोकतन्त्र के समुचित विकास के लिये हमें अविलम्ब परिस्थितियां पैदा करनी चाहिये। आपने हमारी जनता को वयस्क मताधिकार दे दिया है। यदि आप जनता में से निरक्षरता को पूर्णतया मिटाने के लिये पूर्ण उत्साह से कार्यारम्भ नहीं करते हैं तो वयस्क मताधिकार की मंजूरी वरदान होने की अपेक्षा अभिशाप हो जायेगी।

समस्त राष्ट्र-निर्माण सम्बन्धी विभागों की तुरन्त देखभाल करनी चाहिये और यदि जिस रूप में लोकतंत्र को इस संविधान में सोच समझ कर रखा गया है उस रूप में इसे सफल बनाना है तो इन राष्ट्र-निर्माण के कार्यों में निधि की कमी या किसी अन्य कारण द्वारा रुकावट नहीं आने देनी चाहिये। यदि इस महान प्रयोग को सफल बनाना है तो मैं सेवा में के लोगों से विशेष कर निवेदन करूंगा कि वे इस काल का ध्यान रखें। इस सभा में जब सेवा में के लोगों के एक वर्ग के लिये संविधानिक प्रत्याभूतियां निहित की जा रही थीं तो इस सभा का और बाहर का एक बड़ा भाग ऐसा था जिसने उनके प्रति असन्तोष तथा अनिच्छा प्रकट की थी। इसके कारण सेवा के उन वर्गों में पर्याप्त वेदना हुई है जिनके लिये प्रत्याभूति की व्यवस्था नहीं की गई है। प्रत्याभूतियां देने के विरोध में मैं नहीं हूं, मुझे इस बात का खेद नहीं है कि इस संविधान में सेवा में के इन लोगों को कुछ प्रतिभूति दी गई है। सेवायें प्रत्येक सरकार की मेरूदंड होती हैं पर उसके एवज में हम यह आशा करते हैं

[पंडित लक्ष्मीकान्त मैत्र]

कि उन सब सेवा में के लोगों को, जिनको एक सुरक्षित पदावधि की प्रत्याभूति की गई है, हमें यह नैतिक प्रत्याभूति करनी चाहिये कि वे इस अवसर के अनुकूल उन्नत हो जायेंगे और वे अपनी ओर से सेवा की भावना से, अपने देश के प्रति सेवा की भावना से, अपने भाइयों के प्रति सेवा की भावना से, जो उनके अब स्वामी हैं, कार्य करेंगे, न कि केवल अपनी ही सेवा की भावना से कार्य करेंगे। सचिवालय में अथवा अन्य स्थानों में पद प्राप्त करने के लिये छल कपट नहीं होना चाहिये। हमें यह आश्वासन होना चाहिये कि जिस महान कार्य-क्षेत्र में हम प्रवेश कर रहे हैं उसको पूरा करने में सब सेवायें सहयोग देंगी और इस कार्य को पूरा करने में क्या मैं यह कह सकता हूं कि हममें से प्रत्येक व्यक्ति पर उत्तरदायित्व है जिसे हमें पूरा करना है। भावी विधि निर्माता, भावी संसदीय ज्ञान वेत्ता, भावी मंत्री और वे लोग जिनको इस संविधान के प्रवर्त्तन करने के लिये, इस देश में शासन संचालन करने के लिये आमंत्रित किया जायेगा वे प्रथम व्यक्ति होने चाहिये जो अपनी नि:स्वार्थ लगन द्वारा संविधान के उपबन्धों के भावों का परिपालन करने के लिये अपने कठोर तथा सदप्रयत्नों द्वारा शेष देश के लिये उदाहरण प्रस्तुत करें। यदि इस कार्य को कर लिया तो मुझे पूर्ण आशा है कि हम इस देश को उस उच्च स्तर पर ला सकेंगे जिस पर यह पहले था। हम लोग जो कि उस प्राचीन गौरव के उत्तराधिकारी रहे हैं तभी देश के समक्ष और इतिहास के समक्ष खड़े हो सकेंगे और यह कह सकेंगे कि अपने समस्त दोषों तथा कमियों के सहित हमने अपनी निम्न रीति से अपना कार्य पूरा किया है; और भविष्य को वे संभालें जो हमारे बाद में आयेंगे।

अध्यक्ष महोदय: समाप्त करने के पूर्व, मैं जिस प्रस्तावना से हमने अपना संविधान आरम्भ किया है उसके भाव पर सभा में जोर डालना चाहूंगा। मेरे विचार से किसी भी संविधान में पाई जाने वाली वह एक अत्यन्त गंभीर तथा अति महान और सुन्दर घोषणा है। समाप्त करने के पूर्व उसकी ओर मुझे सभा का ध्यान आकर्षित करने दीजिये। मैं उसे पूरा का पूरा नहीं पढ़ूंगा पर जब कि मैं अपने मित्रों के आलोचनापूर्ण भाषणों को सुन रहा था मुझे उसके सुन्दर संदेश की याद आ गई:—

"हम, भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न लोकतन्त्रात्मक गणराज्य बनाने के लिये, तथा इसके समस्त नागरिकों को:

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता, प्राप्त कराने के लिये, तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता सुनिश्चित करने वाली बन्धुता बढ़ाने के लिये दृढ़ संकल्प होकर।"

इन महान शब्दों को, इन गंभीर शब्दों को हम अपने मंत्रों की तरह स्वीकार करें और प्रस्तावना तथा बन्देमातरम् इन दो मंत्रों को लेकर आगे बढ़ें।

***माननीय श्री एन.वी. गाडगिल** (बम्बई: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मुझे याद है कि लगभग तीन वर्ष पूर्व हमने इस संविधान सभा में विचार विमर्श आरम्भ किया था। इन तीन वर्षों में कई घटनायें हुई हैं और इस संविधान के प्रति, जो अब पारित होने वाला है, एक महान घटना जो उल्लेखनीय है वह यह है कि इन तीन वर्षों में जो अनुभव प्राप्त किया गया है वह इस संविधान के खंडों में लिख दिया गया हे। इससे यह सिद्ध हो जायेगा कि जिन लोगों पर इसके मसौदा बनाने का उत्तरदायित्व था वे हरे भरे स्थान के वातावरण में काम करने वाले केवल किसी विद्वत्परिषद के सदस्य या केवल वकील ही न थे। यह ठीक कहा जा चुका कि इतने अल्प काल में इतनी अच्छी रीति से इतना कार्य सिद्ध किया जा चुका है कि अन्य राष्ट्रों द्वारा संविधान का मसौदा बनाने के कार्य में प्राप्त की गई सफलताओं की तुलना में इस सफलता में ऐसी कोई बात नहीं है जिसके लिये किसी को खेद हो सके, वरन ऐसी बहुत सी बातें हैं जिनके लिये युक्ति युक्त रूप से हम गौरव अनुभव कर सकते हैं। तीसरा पठन ऐसा अवसर नहीं है कि संविधान के उपबन्धों का आलोचनात्मक या सुधारात्मक विश्लेषण किया जाये। पर चूंकि इस संविधान की यहां इस सभा के तथा बाहर के अनेक व्यक्तियों तथा पक्षों द्वारा आलोचना हुई है इस कारण मेरी कुछ ऐसी इच्छा है कि मैं उन मुख्य उपबन्धों का पुनर्विलोकन करूं जो इस संविधान में रखे गये हैं।

इस प्रयोजन के लिये मैंने इस देश में से दो पक्षों को चुना है—समाजवादी और हिन्दू महासभा। एक "भारतीय गणराज्य के संविधान का मसौदा" शीर्षिक के अधीन प्रकाशित हुई है जिस का रंग लाल है जो रंग कि कदाचित साम्यवादियों के एकाधिपत्य में है पर इस पर जो चिन्ह है वह उनसे भिन्न है। दूसरे पक्ष—हिन्दू महासभा ने भी "हिन्दुस्तान के स्वतंत्र राज्य का संविधान" नाम से ज्ञात पुस्तक प्रकाशित की है। मैंने इन दोनों लेख्यों का सावधानी पूर्वक अध्ययन किया है और मैंने यह देखा है कि इस देश में जिस संविधान का प्रचलन होना चाहिये उसकी मुख्य बातों में समानता है। लार्ड ब्राइस ने संविधान की यह परिभाषा की है "वह उस राजनैतिक समाज का रूप है जिसका संघठन विधि के द्वारा तथा आधार पर होता है अर्थात् वह जिसमें विधि ने अभिज्ञात प्रकार्यों तथा परिभाषित अधिकारों सहित स्थायी व्यवस्थायें स्थापित की हैं। वह केवल साधारण सिद्धान्तों का संग्रह भी हो सकता है जिनके अनुसार संविधान की शक्तियां, शासितों के अधिकार और इन दोनों में सम्बन्ध का समायोजन होता है।" अत: यह देखना है कि इस संविधान में इस रूप की स्थायी व्यवस्थायें कौन-कौन सी निहित की कई हैं कि जिनसे कोई राजनैतिक व्यवस्था स्थायी हो सकती है एक आधुनिक संविधान की परीक्षा पांच दृष्टिकोणों से की जा सकती है।

1. राज्य का प्रकार जिसके लिये संविधान बनाया गया है।
2. स्वयं संविधान का प्रकार।
3. विधानमंडल का प्रकार।
4. कार्यपालिका का प्रकार।
5. न्यायपालिका का प्रकार।

[श्री एन.वी. गाडगिल]

इस संविधान में राज्य का प्रकार फेडरल है। मुझे इस बात में संदेह है कि यहां अथवा बाहर कोई भी ऐसा व्यक्ति अथवा पक्ष है जो पूर्णतया एकात्मक राज्य का समर्थक रहा हो या अब भी हो।

इतने विशाल देश पर, जिसमें इतनी परम्परायें हों और जिसमें इतनी विभिन्न संस्कृतियां हों जिसमें लगभग दो सौ पचास विभिन्न भाषायें हों, शासन करना और इन सब बातों को इस रूप में एक शासन सूत्र में बांधना, कि एक एकात्मक राज्य, एक विधान-मंडल और एक कार्यपालिका हो, असम्भव है। श्रीमान, आखिरकार प्रत्येक संविधान अतीत के संचित ज्ञान का प्रतीक होता है और संविधानिक क्षेत्रों में के प्रयोगों के कुछ तत्व उसमें निहित होते हैं। जैसा कि मेरे पूर्व वक्ता ने अभी बड़े सुन्दर ढंग से कहा था कि कोरे कागज़ पर लिखना हमारे लिये सम्भव नहीं था। गत डेढ़ सौ वर्षों से और विशेषकर पिछले चालीस वर्षों से देश कुछ राजनैतिक संस्थाओं से प्रभावित हो चुका था और देश में जिन राजनैतिक विचार-धाराओं तथा प्रवृत्तियों का प्रचार हो चुका था उनसे यकायक सारवत् रूप में अलग होना संभव नहीं था। अतः यह स्पष्ट था कि राज्य का प्रकार फेडरल हो। यह एक ऐसा विषय है कि जिस पर इस देश में के सब पक्षों की पूर्ण सहमति है। अन्तर केवल यहां है कि इस फेडरल राज्य में केन्द्र दृढ़ होना चाहिये या दुर्बल। इस विषय में भी दोनों समाजवादी तथा हिन्दू महासभाई भी इस बात से सहमत हैं कि फेडरल राज्य या केन्द्र दृढ़ होना चाहिये। अतः मेरा विचार है कि ऐसी कोई बात नहीं है जिसके लिये लज्जित होना चाहिये। उपबन्ध—यहां तक कि जो सबसे बाद में जोड़े गये हैं उन पर भी विचार करते हुये सब उपबन्ध ऐसे हैं कि इन तीन वर्षों में जो अनुभव प्राप्त हुआ है उनके आधार पर यह नहीं कहा जा सकता कि केन्द्र को अनावश्यक रूप में शक्तिशाली बना दिया गया है। इतिहास का यह अनुभव है कि राष्ट्रीयता के एकरूप करने वाले प्रभाव का जब आभास होता है तो सर्वप्रथम स्वाधीनता पर जोर दिया जाता है और उसके बाद लोकतंत्र पर। जैसा कि मैं कह चुका हूं दृष्टिकोण में संस्कृति में, भाषा में और इतिहास में अन्तर होने के कारण इसके पूर्व कि हम यह कह सकें कि भारतीय राज्य इस रूप में एक पूर्ण एकक है कि वह एक ठोस तथा सुगठित राज्य है हमें अभी बहुत कुछ करना बाकी है। अब भी विघटनात्मक प्रवृत्तियां हैं, अब भी ऐसी व्यक्तिगत तथा प्रान्तीय प्रवृत्तियां हैं कि यदि कोई अप्रिय बात हो जाती है तो बाहर हो जाना चाहते हैं, और आवश्यक राजभक्ति में अब भी तीव्रता की उस मात्रा की कमी है जो हम अन्य फेडरल राज्यों में देखते हैं। जब हमने तीन वर्ष पूर्व यह कार्य आरम्भ किया था तो वास्तव में हमारे सामने महानतम कठिनाई यह थी कि उन अनेक राज्यों को किस प्रकार संघटित किया जाये तो जो एकदम स्वतंत्र हो गये थे तथा सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न भी हो गये थे। पर धीरे-धीरे इस देश का संघटन हुआ और यह देखने के लिये कि यह पूर्ण रूप से सुसंघठित हो और किसी विघटनात्मक प्रवृत्ति या सम्बन्ध-विच्छेद के संकट से परे हो मेरा अब भी यह विचार है कि अभी कम से कम दस वर्ष के लिए एक शक्तिशाली केन्द्र की आवश्यकता है। इस दृष्टिकोण से कुछ उपबन्ध जो केन्द्रीय सरकार को प्रान्तों के कुछ कार्यों या प्रशासनीय क्षेत्रों में निरीक्षण करने, या नियंत्रण करने या निदेश देने की शक्ति प्रदान करते हैं वे सब कल्याण के लिये हैं।

इसके पश्चात्, श्रीमान, जैसा कि मैं कह चुका हूं दूसरी कसौटी स्वयं संविधान का प्रकार है। यहां भी हम परम्परा पर बहुत अधिक निर्भर नहीं कर सकते हैं और इस कारण सदैव दृष्टिकोण यह रहा है कि केवल साधारण सिद्धान्तों को ही न रखा जाये जैसा कि अन्य अनेक देशों में किया गया है वरन बहुत सी अन्य बातों को भी रख लिया जाये और स्वतंत्रता की ओर ले जाने वाली अपनी यात्रा को प्रारंभिक स्थिति में महत्वपूर्ण विषयों को परम्परा पर न छोड़ें। इस संविधान पर यह दोष लगाया गया है कि इसको बहुत अधिक विवरणपूर्ण बना दिया गया है और अधिकांश विवरण हटाया जा सकता था। यह एक ऐसा विषय है जिससे बहुत से लोग सहमत होंगे। पर साथ ही साथ विगत कुछ वर्षों के प्राप्त किये गये अनुभव ने यह सिखाया कि केवल परम्परा पर बहुत सी बातों में निर्भर करना एक संकटजनक कार्य है और इसी कारण उन नये उपबन्धों की आवश्यकता हुई जो इस संविधान में निहित किये गये हैं।

लिखित संविधानों के प्रति महान आपत्ति यह है कि उनमें परिवर्तन करना बहुत कठिन हो जाता है। इस सम्बन्ध में मेरे विचार से जो उपबन्ध अन्तिम रूप में स्वीकार किये गये हैं वे न इतने व्यापक हैं जितने कि आस्ट्रेलिया के संविधान में या संयुक्त राष्ट्र अमरीका के संविधान में हैं और न वे इतने सरल हैं जितने इंगलैंड के संविधान में हैं। साधारण विधि और संविधानिक विधि में कुछ अन्तर होना चाहिये। इसमें सन्देह नहीं कि संविधान की विधि जैसा कि इसके नाम ही से प्रतीत होता है एक संविधानिक विधि है और इसमें कोई परिवर्तन उतनी सुविधाजनक रीति से अथवा मैं यह कहूंगा कि उतनी सरलतापूर्वक नहीं करना चाहिये जैसा कि किसी साधारण विधि में कोई परिवर्तन किया जाता है। किसी भवन का एक समझदार स्वामी भी उस मरम्मत को कराने के लिये दस बार सोचेगा जिसे इंजीनियर निर्माण सम्बन्धी मरम्मत कहते हैं पर बार-बार साधारण मरम्मत कराने में कोई चिन्ता नहीं करेगा। इसी प्रकार इस संविधान के कुछ मूल सिद्धान्त हैं जिनको सरलता से नहीं बदला जा सकता या उतनी साधारण रीति से नहीं बदला जा सकता जैसे किसी साधारण विधि में परिवर्तन किया जाता है। मान लीजिये कि हम राष्ट्रपति के पद को मिटाना चाहते हैं या उसे वंशानुगत बनाना चाहते हैं। क्या एक विधेयक पेश करने और केवल बहुमत द्वारा उसे पारित कर देने की साधारण रीति से हम यह कर सकते हैं? यह संकटजनक होगा। इसी प्रकार वे उपबन्ध और वे व्यवस्थायें जो इस संविधान की आधार शिलायें हैं उनको इतनी सरलता से नहीं निपटाया जा सकता है। अतः जैसा मैंने कहा था जो उपबन्ध बनाये गये हैं न तो बहुत जटिल ही हैं और न बहुत सरल ही हैं।

जो इस संविधान की इस आधार पर आलोचना कर रहे हैं कि इसका निर्माण एक पक्ष ने किया है और यह ठीक वही यन्त्र है जिसका निर्माण फैसिज्म के उद्घाटन के प्रयोजन हेतु किया गया है मैं उनसे निवेदन करूंगा कि वे उन उपबन्धों का अध्ययन करें विशेष कर उन उपबन्धों का जो संविधान की परिवर्त्तनीयता से सम्बन्ध रखते हैं और उनको यह विदित होगा कि यदि वे उसे बदलना चाहते हैं और यदि वे जनता को जनता के प्रतिनिधियों द्वारा उनकी दो-तिहाई की सीमा ही को अपने सहयोग में रख सकते हैं तो वे यदि पूरे के पूरे संविधान को नष्ट करना चाहते हैं तो कर सकते हैं। मेरे मित्र प्रो. के.टी. शाह यह देख सकते हैं कि इस संविधान में उनके पुराने मित्रों और नये दुश्मनों अर्थात् उद्योगपतियों पर उतना

[श्री एन.वी. गाडगिल]

कर लगाने की उनको पर्याप्त शक्ति है कि उद्योगपतियों की सत्ता मिट जाये। इस संविधान में ऐसी कोई बात नहीं है जो पूर्णप्रभुता के समकक्ष न रखी जा सकती हो। विधान मंडल का प्रकार ऐसा है कि जहां तक प्रक्रिया का सम्बन्ध है केवल वहीं तक उसमें निर्बन्धन हैं। पर सार रूप में विधान मंडल या संसद की सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता पर कोई निर्बन्धन नहीं है कोई परिसीमन नहीं है। जैसा कि किसी फ्रांसीसी लेखक ने अंग्रेजी संविधान के लिये कहा था कि "संसद सब कुछ कर सकती है सिवा इसके कि वह नर को नारी नहीं बना सकती।" मेरे विचार से यही इस संविधान के बारे में कहा जा सकता है और मैं समझता हूं कि भावी विधानमंडल जो कुछ नहीं कर सकता है वह यह है कि एक मूर्ख को चतुर नहीं बना सकता।

कार्यपालिका के प्रकार के सम्बन्ध में सब पक्ष इस बात से सहमत हैं कि वह संसदीय होनी चाहिये न कि राष्ट्रपतीय। वह संसद के प्रति उत्तरदायी होनी चाहिये। यह प्रयोग कहां तक सफल होगा यह उन कतिपय परिस्थितियों पर निर्भर करता है जिनके अन्तर्गत वह प्रयोग कार्यान्वित होगा। यदि केवल दो ही पक्ष हों तो मुझे इसमें किंचितमात्र भी सन्देह नहीं कि यह प्रयोग बहुत कुछ रूप में सफल होगा। परन्तु यदि दो से अधिक पक्ष हुये तो मंत्रिमंडल का जीवन बहुत ही संकटमय हो जायेगा। जैसा कि मेरे एक मित्र ने अभी उस दिन एक प्रांत के मंत्रिमंडल के सम्बन्ध में कहा था कि मंत्री लोरीवाले को इस कारण पैसा नहीं देता है कि शायद दूसरे दिन उसे उस मंत्री के बंगले से सामान वापस ले जाने के लिये उसकी आवश्यकता पड़े। फ्रांस के मंत्रिमंडलों जैसा अनुभव भी हो सकता है कि मंत्रिमंडल का औसत जीवन छः महीने से भी कम हो जाये।

इस दशा में जिस बात की आवश्यकता है जो नितान्त आवश्यक है वह वही है जिसका उल्लेख मेरे माननीय मित्र पंडित लक्ष्मीकान्त मैत्र ने, किया है कि एक शक्तिशाली, कुशल, ईमानदार तथा परिश्रमी असैनिक सेवा हो। मंत्री आते जाते रहेंगे; मंत्रिमंडल आते जाते रहेंगे; परन्तु वास्तविक सरकार; वास्तविक शासन असैनिक सेवाओं द्वारा चलता रहेगा। इस दृष्टिकोण से मेरी व्यक्तिगत सम्मति यह है कि यद्यपि जो उपबन्ध इस संविधान में बनाये गये हैं वे अच्छे हैं परन्तु वे पर्याप्त नहीं हैं। क्योंकि असैनिक सेवाओं पर देश का सुशासन निर्भर करता है: मंत्रिमंडल तथा संसदीय नेताओं पर यह बात निर्भर करती है कि सरकार लोकप्रिय है या अन्यथा। एक स्वतन्त्र देश में एक सर्वसाधारण व्यक्ति जो कुछ चाहता है या जिसके लिये उत्सुक रहता है वह सुशासन है, क्योंकि सुशासन प्राप्त कर लेने पर यह स्वाभाविक है कि स्वशासन से हट कर जोर सुशासन पर हो जाता है। मैं यह कहूंगा कि इस संविधान में जिस संसदीय कार्यपालिका का विचार प्रस्तुत किया गया है उसके लिये उच्च चरित्रबल के व्यक्तियों की अपेक्षा है और इस संविधान के अधीन सम्पूर्ण भार, सम्पूर्ण उत्तरदायित्व वस्तुतः अध्यक्ष पर नहीं डाला गया है जैसा कि कुछ माननीय सदस्यों द्वारा सुझाव दिया गया था वरन वह प्रधान मंत्री पर, उसके व्यक्तित्व पर, कार्यारम्भ करने की उसकी चेतना पर, कथन करने की उसकी सामर्थ्य पर, लोक-मत का प्रतिवाद करने या उसके अनुकूल होने की उसकी सामर्थ्य पर और सबसे अधिक लोकप्रिय बातों के विरुद्ध ठीक और सही कार्य करने की

उसकी सामर्थ्य पर रहेगा—इस गुण और इस नैतिक साहस पर इस प्रयोग की सफलता या असफलता अवलम्बित होगी।

विधानमंडल के सम्बन्ध में हमने दोघरे विधानमंडल स्वीकार किये हैं और इस पर मुझे कोई आपत्ति नहीं है और चूंकि निर्वाचक मंडल वयस्क मताधिकार पर आधृत होंगे मेरे विचार से प्रत्येक विधानमंडल को जितना गौरव प्राप्त होगा वह उससे कहीं अधिक होगा जो आज उसे प्राप्त है। पर इसके साथ-साथ अपने स्वामियों को शिक्षित बनाने का महान उत्तरदायित्व आ जाता है। यदि निर्वाचक मंडल सामान्य रूप में पर्याप्त शिक्षित नहीं है, यदि उसे किसी महान समस्या की ब्योरेवार नहीं वरन् एक मोटी रूप रेखा में जांच करने की सामर्थ्य नहीं है, यदि उसे एक व्यक्ति की दूसरे व्यक्ति के समक्ष परख करने की सामर्थ्य नहीं है तो जिस लोकतंत्र की हम कल्पना कर रहे हैं वह असफल होगा। प्रोफेसर लास्की ने यह कहा है कि विश्लेषण करने पर अन्तिम रूप में यह विदित होता है कि निर्वाचक मंडल के समक्ष कार्यक्रम की तुलना में कार्यक्रम प्रस्तुत नहीं किया जाता है वरन नेतृत्व का व्यक्तिगत समीकरण प्रस्तुत किया जाता है यद्यपि बाह्य रूप में कार्यक्रम ही प्रस्तुत होता है। अमुक पक्ष का नेतृत्व किसके हाथ में है? साधारण जन पर इसका ही प्रभाव पड़ता है। व्यक्तित्व का अनिवार्य प्रभाव पड़ता है—और इस देश में तो और भी अधिक प्रभाव पड़ेगा जहां महान आत्माओं का पूजन प्रचलित है और जहां यह कहना चाहिये कि राजभक्ति व्यक्ति जीवन का धर्म है। अतः निर्वाचक मंडल को शिक्षित बनाने की आवश्यकता सबसे बड़ी आवश्यकता है। अतः मैं इस बात पर जोर दूंगा कि जिन लोगों ने इस संविधान के निर्माण करने में भाग लिया है वे इस समय से लेकर निर्वाचन तक के बीच के समय को अपने-अपने निर्वाचक-मंडलों को इस संविधान के उपबन्धों को समझाने में लगायें।

न्यायपालिका के सम्बन्ध में श्रीमान, हमने उसको स्वाधीनता दी है और मैं समझता हूं कि ऐसी कोई बात नहीं है जिसमें हम उन साधारण उपबन्धों से दूर हो गये हों जो अन्य देशों के संविधानों में पाये जाते हैं। आखिर संविधान तो केवल एक यंत्र मात्र है और उसकी मुख्य कसौटी तो यह है कि क्या उसके द्वारा उन आर्थिक तथा सामाजिक लक्ष्यों की प्राप्ति हो जाती है जो हमारी दृष्टि में हैं यह यदि नहीं होती है तो उसे अस्वीकार कर देना चाहिये चाहे वह देश के महानतम संविधान के जानकारों अथवा महानतम वकीलों या स्मृतिज्ञों द्वारा बना हुआ हो और चाहे उन लोगों ने संघर्ष में भाग लिया हो या न लिया हो इससे कोई अन्तर नहीं आता। मुख्य बात यह है कि क्या यह यंत्र ऐसा है जो इस प्रकार का हो कि जिससे हम उन सामाजिक तथा आर्थिक लक्ष्यों को प्राप्त कर सकें जो इस संविधान की प्रस्तावना में इतने सुन्दर शब्दों में निहित किये गये हैं। मैं इस संविधान की प्रस्तावना की तुलना अपने प्राचीन नाटकों के नान्दी-पाठ से करता हूं। नाटक की प्राचीन पुस्तकों में यह कहा गया है कि नान्दी पाठ ऐसा होना चाहिये कि उसमें कुछ ऐसे सुझाव हों जो यह प्रकट करें कि नाटक की क्या कथावस्तु होगी। इस संविधान में ठीक यही किया गया है। आलोचना की एक धारा का मुझे स्मरण होता है जो इस प्रकार थी कि इस संविधान में आर्थिक समता की प्रत्याभूति नहीं है। मैं उनसे यह कहूंगा कि वे केवल इन शब्दों को पढ़ें "सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक न्याय"। वर्त्तमान परिस्थितियों के प्रसंग में मैं यह कल्पना नहीं कर सकता

[श्री एन.वी. गाडगिल]

हूं कि यदि निजी उद्यमों को स्वतंत्र तथा निर्विरोध छोड़ दिया जाये तो सामाजिक न्याय सम्भव हो सकता है। पर जिन पर शासन का भार है यदि वे सामाजिक न्याय प्राप्त कराने के प्रति उत्सुक हैं और जब इस उद्देश्य से वे कार्य करेंगे तो परिवर्तन अवश्य होगा और उनको उत्पादन के साधनों का समाजीकरण करना पड़ेगा। केवल समाज का स्वामित्व ही सामाजिक न्याय प्राप्त करायेगा। इससे किसी प्रकार नहीं बच सकते हैं। यदि अमुक व्यक्तियों के हाथ में शक्ति रहती है तो यह धीरे-धीरे होगा और यदि अन्य लोगों के हाथ में शक्ति आती है तो वह शीघ्र होगा। पर जिस बात को मैं कहना चाहता हूं वह यह है कि इस संविधान में यह विचार प्रस्तुत किया गया है कि उत्पादन के साधनों के स्वामित्व, नियंत्रण और विनियमन को समाज के नेताओं के हाथों में सौंपते हुए—दूसरे शब्दों में राज्य के हाथों में सौंपते हुए सम्प्रदाय का संगठन करके सामाजिक न्याय प्राप्त किया जायेगा।

श्रीमान, संविधान एक यंत्र है और वह स्वयं लक्ष्य की पूर्ति नहीं है। चतुर कारीगर के हाथों में जाकर वह उसे जो कुछ वह चाहता है प्रदान कराने में सहायक होगा। असावधान कारीगर के हाथ में जाकर उसके लिये शिकायत की उसमें पर्याप्त मात्रा है। मेरी तुच्छ सम्मति में दोषों के होते हुए भी (इस संविधान में दोष अवश्य हैं और इसकी प्रशंसा करते हुये मैंने विवेक का परित्याग नहीं किया है यद्यपि अन्य व्यक्तियों के समान विश्वामित्र की तरह मैं इसका खंडन करना नहीं चाहता हूं) इस संविधान से वे सामाजिक और आर्थिक लक्ष्य प्राप्त किये जा सकते हैं जिनका प्रस्तावना में समर्थन है। एक दूरदर्शी राष्ट्रपति प्राप्त करके, उत्साह और विचार पूर्ण प्रधान मंत्री प्राप्त करके, प्रसन्नचित विधि-निर्माताओं तथा उत्तरदायित्वपूर्ण विरोधी दल प्राप्त करके मेरे विचार से ऐसी कोई बात नहीं है जो हमें इस संविधान के अधीन उन लक्ष्यों को प्राप्त करने से रोक सके जिनका हममें से प्रत्येक व्यक्ति समर्थक है।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगार** (मद्रास: जनरल): श्रीमान, संविधान को अन्तिम रूप दिया जा चुका है और यह अवसर अपने श्रम पर एक और दृष्टि डालने के लिये है। इसमें सन्देह नहीं कि इस संविधान को हमने तीन वर्ष पूर्व आरम्भ किया था। जो समय इसमें लगा है वह अधिक नहीं है और इस समय का सदुपयोग हुआ है। केबिनेट मिशन की योजना के अधीन जब हमने कार्यारंभ किया था यह आशा थी कि केन्द्र के अन्तर्गत पाकिस्तान सहित समस्त भारतीय संघ आ जायेगा और उस सबके लिये संविधान बनेगा। उस समय यह विचार किया गया था कि केन्द्र केवल प्रतिरक्षा, संचार और विदेशी विषयों पर ही शक्तियां रखते हुये दुर्बल होना चाहिये। यदि हम उस योजना को स्वीकार कर लेते तो देश में के 565 राज्य सरलता से इस ढांचे में नहीं आते। यद्यपि हमारा कोई दोष न था फिर भी मुस्लिम लीग उसमें सम्मिलित नहीं हुई—नवम्बर या दिसम्बर 1946 से 15 अगस्त 1947 तक, जब कि देश का विभाजन हुआ, हमें उसके सम्मिलित होने की आशा में प्रतीक्षा करनी पड़ी। 15 अगस्त 1947 के बाद हमें उन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा जो विभाजन, शरणार्थियों, महात्मा गांधी की हत्या, हैदराबाद का झगड़ा और काश्मीर युद्ध के कारण पैदा हुई और इन कठिनाइयों में हमारा

बहुत सा समय लग गया। बहुत समय बाद हम इस कार्य में लगे और जितने दिन हम बैठे उसका हिसाब लगाया जाये तो इस दीर्घ काल में हमने पांच महीने से अधिक समय नहीं लगाया है। उन कारणों से जो हमारे काबू से बाहर थे हम इन विषयों को शीघ्र नहीं निपटा सके। उन विभिन्न समस्याओं पर और उनके आकार प्रकार पर तथा उन विभिन्न हितों पर विचार करते हुये, जिनको सुलझाना था, हमारी जैसी विशाल जन संख्या वाला कोई अन्य देश, मुझे पूर्ण विश्वास है कि, अपना संविधान बनाने में तीन वर्ष न लगाता बल्कि बहुत अधिक वर्ष लगाता। अतः यह हमारे लिये गौरव का विषय है कि आखिर हमने अपने इस परिश्रम को तीन वर्ष में समाप्त कर दिया।

आइये हम यह देखें कि इस समय में जो देखने में इतना दीर्घ है पर वस्तुतः बहुत ही अल्प है हमने क्या किया। हमने बहुत सी आश्चर्यजनक सफलतायें प्राप्त की हैं। हमने भारत का एकीकरण किया और यह कोई कागज पर की ही सफलता नहीं है। इस समय में जैसे-जैसे हम इस संविधान के विभिन्न अनुच्छेदों का निर्माण करते गये वैसे ही वैसे हम उनको प्रवृत्त भी करते गये। हमने वास्तव में कई समस्याओं को सुलझाया और उसके बाद उनको संविधान में रखा। किसी अन्य देश में बिना खून बहाये 565 राज्यों का प्रवेश नहीं हो सकता था जैसा कि भारतीय संघ में हुआ। बिना खून बहाये यह सफलता प्राप्त की गई है और अब तक के हमारे अंग्रेज स्वामियों के लिये यह आश्चर्य की बात है कि एक बूंद खून तक बहाये बिना हमने इस कार्य को पूरा किया और इतनी सरलता से कि जनता ने स्वयं उसे स्वीकार किया। महाराज और राजकुमार सहर्ष संघ में सम्मिलित हुये और उसको सफल बनाने के लिये उद्यत हैं।

इसके बाद राज्यों के संविधान सम्बन्धी सफलतायें हैं। सर्वप्रथम राज्य इसके अन्तर्गत आने के इच्छुक न थे, और जब उनको प्रान्तों के साथ बुलाया गया तो राज्यों के लिये निर्मित अनुकरणीय संविधान को उन्होंने स्वीकार कर लिया है। यह कार्य भी बिना अधिक कष्ट या विरोध के पूरा कर लिया गया है। जिन व्यक्तियों पर इस कार्य का भार था उन्होंने सफलतापूर्वक इस कार्य का प्रबन्ध किया और लगभग प्रत्येक राष्ट्र संघ में आ गया है।

अल्पसंख्यक वर्गों की समस्या सरलता से हल नहीं की जा सकती थी, पर विभिन्न धार्मिक तथा अन्य अल्पसंख्यक वर्गों को धन्यवाद है कि उन पथृक निर्वाचक-मंडलों का परित्याग कर दिया गया जिनके द्वारा ब्रिटिश सरकार ने इस देश में एक सम्प्रदाय को दूसरे सम्प्रदाय से विभाजित किया और देश पर शासन किया। आरम्भ में ही उन्होंने पृथक निर्वाचक-मंडलों को त्याग दिया और स्थानों के रक्षण सहित संयुक्त निर्वाचक-मंडलों को अपनाया पर बाद में उन्होंने स्थानों के रक्षण को भी छोड़ दिया। उनकी दूरदर्शिता को धन्यवाद है, देश के एकीकरण में यह एक अन्य कदम है और मुझे विश्वास है कि इसको उसी रूप में कार्यान्वित किया जायेगा जिस रूप में अल्पसंख्यक वर्गों ने स्वीकार किया है। अब यह बहुसंख्यक सम्प्रदाय पर छोड़ दिया गया है कि वह यह सिद्ध करे कि किसी व्यक्ति का चाहे जो कुछ धर्म हो केवल उसकी योग्यता और सेवा-भावना पर ध्यान दिया जायेगा न कि उसके संप्रदाय पर और अल्पसंख्यक वर्गों के व्यक्तियों से केवल इस आधार पर विभेद नहीं बरता जायेगा कि वे किसी विशिष्ट अल्पसंख्यक सम्प्रदाय के व्यक्ति हैं।

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगार]

एक और कष्टदायक प्रश्न एककों और केन्द्र में शक्ति-विभाजन का था। एक समिति नियुक्त की गई और प्रान्तों के मुख्य मंत्री जो उसमें सम्मिलित हुये थे उन्होंने जहां आवश्यक समझा सहर्ष स्वीकार किया और इस प्रकार केन्द्र को शक्तिशाली बनाया। यहां तक कि उद्योग और वाणिज्य के क्षेत्र में भी जहां संसद ने यह आवश्यक समझा कि समूचे भारत के लोक-हित के लिये किसी विशिष्ट उद्योग का केन्द्रीय विधान-मंडल द्वारा विनियमन किया जाये वहां समस्त देश के हित को ध्यान में रख कर इसे एक रियायत के रूप में मंजूर किया गया।

केन्द्र तथा राज्यों और प्रान्तों में वित्तीय शक्तियों का बंटवारा बहुत समय तक हल नहीं हो पाया और एक स्थिति में तो ऐसा प्रतीत हुआ है कि यह हल नहीं हो सकेगा। विक्रयकर जिस पर तू तू मैं मैं हुई अन्त में मिलकर तय कर लिया गया। संपत्ति-अर्जन का विषय भी सरल नहीं था। उदाहरणार्थ जमींदारी ले लेने पर प्रतिकर के विषय को लीजिये। अन्य देशों में सामन्तशाही पट्टों को मिटाने में बहुत समय लगता और इस प्रश्न पर युद्ध तक हो जाते। कई प्रान्तों में जमींदारी सम्बन्धी विधान का कार्य आरम्भ कर दिया गया है। यद्यपि प्रतिकर के सम्बन्ध में एक बार ऐसा प्रतीत हुआ कि इस वाद हेतु से यह सारा का सारा विधान टूट जायेगा पर अन्त में राष्ट्र ने इसका भी हल खोज लिया।

इसके बाद भाषा का प्रश्न है जिस पर हमने यह सोचा कि कभी न कभी इस विषय पर बहुत वाद विवाद होगा। तीन या चार बार इस सभा से बाहर तथा इस सभा में भी हम एकत्रित हुए और अन्त में इस विषय पर भी हमने मिलकर संकल्प कर लिया। राष्ट्रभाषा या भारत की राजभाषा के रूप में हिन्दी स्वीकार कर ली गई है। ये ऐसे विषय हैं जिनमें से प्रत्येक यदि वर्ष नहीं तो कई महीने अवश्य लेता। हमने इन सब को हमारे पास जो अल्प समय था उसी में हल कर लिया।

कुछ उन आलोचकों को मैं उत्तर देने का प्रयास करूंगा जो यह कहते हैं हमने लगभग एक लाख रुपया प्रति दिन खर्च किया है अथवा ऐसी ही अन्य बातें कहते हैं। यह पूर्णतया गलत है। बाहर के लोग जो स्थिति का वास्तविक रूप में अनुमान नहीं कर पाते हैं वे दिनों की संख्या से बहक जाते हैं। तथ्य यह है कि हमने अधिक खर्च नहीं किया है। इसके विपरीत रुकावटें होते हुये भी हम कार्य करते रहे और अब सफलतापूर्वक संविधान की समाप्ति पर हैं।

हम यह ठीक-ठीक मालूम करें कि यह किस प्रकार का संविधान है जिसे हमने आत्मार्पित किया है। मैं यह दावा करता हूं कि यह संविधान पूर्णतया लोकतंत्रात्मक संविधान है। यह संविधान सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता को जनता में निहित करता है और इस सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता का पूर्ण रूप से प्रयोग करने की उसको शक्ति देता है। राजनैतिक प्रभुता के साथ-साथ इस संविधान में सामाजिक न्याय भी दिया गया है। व्यक्ति में परस्पर कोई भेद-विभेद नहीं है। बिना किसी पक्षपात के सब समान अधिकारों का प्रयोग कर सकते हैं, जब तक कि कोई व्यक्ति शील या लोक-चेतना के विरुद्ध न हो। अस्पृश्यता को सदा के लिए मिटा दिया गया है। आर्थिक क्षेत्रों में भी यद्यपि हमने स्पष्ट शब्दों में ऐसा नहीं कहा है पर हमने

समाजवादी लोकतंत्र को ही रखा है जिसका स्पष्ट रूप में कहना मैं अधिक पसन्द करता। संपत्ति अर्जन करने के लिये सब व्यक्तियों को समअवसर दिया गया है।

इस संविधान के विरुद्ध एक यह तर्क प्रस्तुत किया जाता है कि यह भारत सरकार अधिनियम 1935 की प्रतिलिपि मात्र है और यह हमारे राष्ट्र की विचारधारा का प्रतीक नहीं है। इस तर्क में कुछ सच्चाई है पर वह पूर्णतया सच नहीं है। इस समय राजनैतिक क्षेत्र में दो विचारधारायें हैं जो एक-दूसरे के विरुद्ध कार्य कर रही हैं। एक पूंजीवादी लोकतंत्र है दूसरी समाजवादी आधिपत्य है। समाजवादी आधिपत्य रूस में प्रचलित है और पूंजीवादी लोकतंत्र अमरीका और इंगलैंड में है। संसार को आज दोनों राजनैतिक और आर्थिक क्षेत्रों में लोकतंत्र की आवश्यकता है। किसी मनुष्य से यह कहने से कोई लाभ नहीं होता कि संपत्ति के लिये समअवसर के बिना वह राजनैतिक लोकतंत्र से संतोष करे और उत्पादन के साधन चन्द व्यक्तियों के हाथों में सीमित कर दिये जायें। पूंजीवादी लोकतंत्र में राजनैतिक स्वतंत्रता है पर आर्थिक अधिपत्य है। समाजवादी अधिपत्य में राजनैतिक स्वतंत्रता नहीं है पर आर्थिक लोकतंत्र है। ये दो बल परस्पर संषर्घ कर रहे हैं और संभव है कि शीघ्र ही युद्ध छिड़ जाये। मैंने सोचा कि हम इन दोनों के बीच का मार्ग ग्रहण करें और ऐसा संविधान बनायें जो समाजवादी लोकतंत्र को निरूपित करे, दोनों आर्थिक और राजनैतिक क्षेत्रों के लोकतंत्रात्मक होने से शक्ति अथवा संपत्ति चन्द व्यक्तियों के हाथों में न रहेगी। एक अर्थात् राजनैतिक लोकतंत्र का निरुपण कर दिया गया है। जाति, रंग अथवा धर्म के बिना किसी भेद-विभेद के प्रत्येक पुरुष और स्त्री को इस देश की सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता धारण करने का और जैसी वह चाहे वैसी सरकार स्थापित करने और समय समय पर उसे बदलने का हक है। सामान्यतया अर्हता के रूप में साक्षरता या किसी प्रकार की शिक्षा पर आग्रह किया जाता है पर हमने यहां यह उपबन्ध किया है कि 21 वर्ष से अधिक आयु का कोई व्यक्ति जिस रूप की सरकार बनाना चाहता है उस रूप की सरकार बनाने में भाग लेने का उसे हक है। परन्तु आर्थिक क्षेत्र में मैं इस बात को बहुत पसन्द करता कि हम उस सिद्धान्त की परिभाषा से सूत्रपात करते जिसको हम एक लोकतंत्रात्मक समाजवादी गणराज्य में निरूपण करने का प्रयास कर रहे हैं। पर दुर्भाग्यवश हम शेष जनता को अपने साथ नहीं ले सके हैं। "समाजवाद" शब्द तक निन्दनीय समझा गया। पर बाद में निदेशक सिद्धान्तों में के कई खंडों द्वारा हमने पूंजीवादी की कठोरता को दूर कर दिया है। संसद में औद्योगिक नीति की परिभाषा में यह कहा गया था कि हम एक मिली-जुली आर्थिक व्यवस्था का अनुसरण करेंगे, अर्थात्, यह कि कुछ क्षेत्रों में राज्य उद्यमों का संचालन करेगा और अन्य क्षेत्र निजी उद्यमों पर छोड़ दिये जायेंगे। यद्यपि हमने शब्दों में ऐसा नहीं कहा है, पर इस संविधान में इसके लिये पर्याप्त उपबन्ध हैं और यदि उनको ठीक प्रकार से कार्यान्वित किया जायेगा तो शीघ्र ही देश में समाजवादी लोकतंत्रात्मक गणराज्य का निरूपण हो जायेगा।

इसके बाद, श्रीमान, यह भी कहा जाता है कि अनुच्छेद 93 और 371 के द्वारा केन्द्र को बहुत अधिक शक्ति सौंप दी गई है और यह बहुत कुछ संभव है कि इसके कारण देश मैं फैसिस्ट प्रवृत्तियां फैल जायें। मैं कहता हूं कि इसके कारण ऐसी

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगार]

कोई तानाशाही नहीं होगी। हमारे देश में 14 प्रतिशत से अधिक साक्षर नहीं हैं और सबको साक्षर बनाने में काफी समय लगेगा। अत: मुझे तो इस बात में भी सन्देह है कि वयस्क मताधिकार इस देश में सफल भी हो सकेगा या नहीं। यदि यह बात मुझ पर छोड़ी जाती तो मैं इस बात को अधिमान देता कि गांव को एकक बनाया जाये और वयस्क मताधिकार द्वारा पंचायत बनाई जाये जिनमें स्थानीय परिषदें इत्यादि हों और निर्वाचन परोक्ष हों। पर समय के अनुसार हमने देश के लिये वयस्क मताधिकार को चुना है। मुझे विश्वास है कि प्रौढ़ शिक्षा की उन्नति के साथ साथ यह अद्भुत प्रयोग भी शीघ्र ही सफल होगा जिसे हम वयस्क मताधिकार के रूप में इस देश में कर रहे हैं और प्रौढ़ शिक्षा के लिये हमने निदेशक सिद्धान्त में व्यवस्था की है और वह यह है कि प्रत्येक लड़के और लड़की के लिये 14वीं वर्ष की आयु तक शिक्षा नि:शुल्क तथा अनिवार्य होगी। इस बात पर भी हमें कोई शंका नहीं होनी चाहिये। जब तक प्रत्येक व्यक्ति साक्षर न हो तब तक अनुच्छेद 93 और 371 में जैसे उपबन्ध रखे गये हैं वैसे उपबन्धों की आवश्यकता होगी। यह एक परित्राण है जिसका इस देश में स्वतंत्रता के समस्त प्रेमियों द्वारा स्वागत होगा।

अत: मेरा विचार है कि यदि इन विभिन्न उपबन्धों को उसी रूप में कार्यान्वित किया जायेगा जिस रूप में इनका निर्माण किया गया है तो इस देश में शान्ति तथा मेल-जोल का प्रसार होगा। इस सभा के सदस्यों और बाहर के प्रत्येक स्त्री पुरुष को यह अनुभव करना चाहिये कि यह संविधान उन्हीं का है। कोई अन्तर नहीं रखा गया है। इस बात में कोई सन्देह नहीं कि यह एक प्रतिनिधियों की सभा है। इस संविधान के बनाने में सब संप्रदायों ने हिन्दू, मुसलमान, सिख, पारसी, अनुसूचित जातियां तथा अनुसूचित जनजातियां सबके प्रतिनिधियों ने भाग लिया है। यहां सब राजनैतिक हितों का प्रतिनिधान है। यहां सब विचार धाराओं के नेता हैं। यहां तक कि डॉ. अम्बेडकर जो केवल देखने के लिये आये थे उन्होंने भी इस संविधान के निर्माण में प्रमुख भाग लिया है और जिस संविधान को हम अब पारित कर रहे हैं उसके वे भी एक बनाने वालों में से हैं। वही व्यक्ति जिसे शंका थी और जो आलोचना करने के लिये आया था उसने अन्त में इस संविधान का भार ग्रहण किया और उसका निर्माण किया। मैं उसको बधाई देता हूं और उसके प्रति जो सद्भावना हमने प्रकट की उसके लिये अपने आपको और जिस प्रकार से उसके प्रत्युत्तर में सौजन्यपूर्ण व्यवहार उसने किया उसके लिये उसको बधाई देता हूं। आखिर निकटतर सम्पर्क द्वारा हम एक दूसरे के दृष्टिकोण को सरलता से समझ सकते हैं। जब तक हम दूर दूर रहते हैं हम अपने छोटे-छोटे विरोधों को बढ़ा-चढ़ा देते हैं। यदि यह संविधान उसी भावना से कार्यान्वित किया जाता है जिस भावना से यह बनाया गया है तो मुझे विश्वास है कि हमारा राष्ट्र संसार में एक अग्रगण्य राज्य होगा।

हम लोगों में श्री अल्लादि कृष्णास्वामी ऐयर जैसे महान स्मृतिज्ञ कई थे जिनको हम भूल नहीं सकते हैं। अपना दुर्बल तथा बुरा स्वास्थ्य होने पर भी इस सभा में तथा इससे बाहर समितियों में दोनों स्थानों में उन्होंने महान सेवा की। हम लोगों में हमारे मित्र श्री गोपाला स्वामी आयंगार जैसे प्रशासक भी हैं। एक असैनिक सेवक के रूप में, उसके बाद राज्यों में दीवान के रूप में, फिर राज्य-परिषद में उनको बहुत अनुभव है। यद्यपि बाद में इस कार्य को डॉ. अम्बेडकर के ले लेने पर उनके पास यह कार्य नहीं रहा और संविधान के विषय में उनका ज्यादा हाथ नहीं

रहा, पर मुझे विश्वास है कि उन्होंने जो महान सेवायें की हैं उनको हम नहीं भूलेंगे। सभा के प्रत्येक वर्ग ने अपना पूर्ण सहयोग दिया। हमारे कुछ मित्र जिन्हें संशोधन प्रस्तुत करने का बड़ा उत्साह था जैसे श्री कामत, श्री शिब्बनलाल सक्सेना, श्री सिधवा और डॉ. पंजाबराव देशमुख जिन्होंने बाद में अपना नाम इस सूची में जुड़वा लिया, इन सबने सहयोग दिया। यद्यपि अपने मित्र प्रो. के.टी. शाह द्वारा प्रस्तुत किये गये कई संशोधनों को हम स्वीकार नहीं कर सके जिनकी विद्वता, बुद्धि और योग्यता का मैं बहुत प्रशंसक हूं, पर इस सभा के बाहर जब मैंने उनसे इस विषय पर बातें कीं तो उन्होंने यह स्वीकार किया कि यद्यपि हम उनके संशोधनों को स्वीकार नहीं करेंगे पर चूंकि वे अपना दृष्टिकोण हमारे सामने रखना चाहते थे इस लिये उन्होंने संशोधन प्रस्तुत किये। उन्होंने एक अच्छे खिलाड़ी की तरह अपनी पराजय स्वीकार की है। अत: मैं समझता हूं कि अपनी अपनी सामर्थ्य के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति ने सहर्ष इस संविधान का निर्माण किया है। यदि कुछ लोगों की पराजय भी हुई तो वह पराजय इस रूप में स्वीकार की गई है कि अल्पसंख्यक मत वालों ने बहुसंख्यक मत वालों के समक्ष इस आशा में अपने विचार रखे हों कि किसी न किसी समय भविष्य में वे बहुसंख्यक मत वालों के विचार अपने पक्ष में कर लेंगे।

अन्तिम बात यह है श्रीमान कि हमने इस देश का विस्तार करने का प्रयत्न नहीं किया है। हमें राज्य-विस्तार लिप्सा नहीं है। हम अन्य देशों के प्रदेश नहीं चाहते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भी हम शान्ति और मेल-जोल चाहते हैं। इस सम्बन्ध में संविधान में इस भाव का एक खंड जोड़ दिया है कि परस्पर राष्ट्रों के झगड़ों का निपटारा करने के लिये पंचायत के नियम का पालन होना चाहिये न कि युद्ध। मुझे पूर्ण विश्वास है कि हम राष्ट्रों में परस्पर युद्ध को बचाने के लिये अपना भरसक प्रयत्न करेंगे और शान्ति पूर्ण रीतियों द्वारा अंतर्राष्ट्रीय झगड़ों को निपटाने के लिये मध्यस्थ के रूप में कार्य करेंगे।

श्रीमान, इस अवसर पर यदि मैं राष्ट्रपिता-महात्मा गांधी—संसार में शान्ति और प्रेम के अवतार के प्रति अपनी तुच्छ श्रद्धांजलि अर्पित न करूं तो मैं स्वयं अपने ही प्रति अन्याय करूंगा। *(तालियां)*। मैंने प्रस्तावना पर इस प्रकार का संशोधन प्रस्तुत किया था कि हमें अपने देश और अपने संविधान के लिये उनका चिर आशीर्वाद प्राप्त करने के लिये उनसे प्रार्थना करते हुये इसे आरम्भ करना चाहिये। मैंने देखा कि आयरलैंड के संविधान में एक इसी प्रकार का उपबन्ध है जो "सर्वशक्तिमान की कृपा से..." शब्दों द्वारा आरम्भ हुआ है। मैंने सोचा कि इसी प्रकार से हम "महात्मा गांधी—राष्ट्र पिता की कृपा तथा आशीर्वाद से" इन शब्दों द्वारा आरम्भ करते। पर मेरा संशोधन पेश न होने दिया गया। श्रीमान, चाहे उनका नाम प्रस्तावना में अंकित हो या न हो कोई भी व्यक्ति हमारे हृदयों में से महात्मा गांधी की शान्तिपूर्ण तथा गंभीर वाणी को नहीं मिटा सकता। उनको अपना आदर्श मानकर आइये हम आगे बढ़ें और शान्ति के लिये तब तक प्रयत्न करते रहें जब तक कि सुख और शान्ति का संसार में साम्राज्य स्थापित न हो जाये। भगवान हम पर कृपा करें।

***माननीय श्री बी.जी. खेर** (बम्बई: जनरल): अध्यक्ष महोदय, इस अवसर पर मैं इस कार्य की समाप्ति पर अपनी कृतज्ञता प्रकट किये बिना नहीं रह सकता हूं और इस बात का मानना बड़ा ही कठिन सा प्रतीत होता है कि इस कार्य

[श्री बी.जी. खेर]

को हमने केवल तीन वर्ष पूर्व ही आरम्भ किया था। मुझे याद है हमारी पहली बैठक 9 दिसम्बर 1946 को हुई थी और इन तीन वर्षों में इतनी अधिक घटनायें हुईं कि सामान्यतया उनको सुलझाने में शायद तीन दशक लगते। बाहर जो घटनायें हुईं उनके कारण हमारे संविधान में भी रूप-भेद हुआ है। अत: मेरी प्रथम प्रेरणा यह है कि एक बड़े कठिन, विशाल तथा महान कार्य को समाप्त करने और स्वतंत्र भारत को संविधान देने के प्रति मैं इस सभा को बधाई दूं। प्रत्येक व्यक्ति इस बात से सहमत होगा कि यह एक महान कार्य था। भारत ने जिस रीति से स्वाधीनता प्राप्त की यह रीति जितनी अनूठी थी उतना ही अनूठा इसी संविधान सभा का यह संविधान है। मैं नहीं समझता हूं कि कहीं भी एक संविधान सभा संविधान बनाने वाले निकाय के रूप में और देश की संसद के रूप में तीन वर्ष जैसे एक दीर्घ काल तक कार्य करती रही हो। तीन वर्ष के परिश्रम के बाद हमने एक संविधान का निर्माण किया है जिस पर गौरव करने का हमें पूरा पूरा अधिकार है।

जैसा कि मैंने कहा था कि हमारे संविधान के मसौदे में हमारे पहली बार अधिवेशन करने के बाद जो घटनायें हुईं उनके कारण बहुत कुछ परिवर्तन हुआ है। श्रीमान, इस बात को स्मरण रखिये कि मई 1946 में ही केबिनेट मिशन ने हमें एक दुर्बल केन्द्र दिया था—इसमें सन्देह नहीं कि वह एक फैडरेशन था पर एक बहुत दुर्बल केन्द्र के सहित था। लगभग 565 राज्यों और पन्द्रह प्रान्तों के सहित हमें एक संघ का निर्माण करना था जिसमें प्रतिरक्षा, विदेशी सम्बन्ध और संचार ही फेडरेशन के सब एककों के लिये संगठित होने के साधन थे। अब जो फेडरेशन हमने अपने देश के लिये रखा है उस पर ध्यान दीजिये। फेडरेशन का निर्माण इस विचार से किया गया है कि एक शक्तिशाली केन्द्र को शक्तिशाली रूप में संघठन करने के साधन हों।

हमने ऐसी कई समस्याओं को सुलझा लिया है जो आरम्भ में न सुलझने वाली सी प्रतीत होती थीं। पृथक निर्वाचक-मंडलों का प्रश्न था, मताधिकार की समस्या थी और अल्पसंख्यक वर्गों का प्रश्न था। परस्पर सद्भावना और एक-दूसरे के विचारों का सम्मान करते हुये इन समस्याओं को हमने अब संतोषजनक रीति से सुलझा लिया है। हमने इन सब जटिल समस्याओं को सुलझा लिया है जिनमें भाषा और लिपि की बड़ी दु:खदाई समस्या भी सम्मिलित है। उन सब विषयों को लेना मेरे लिये आवश्यक नहीं है जो इस संविधान के 395 अनुच्छेदों के अन्तर्गत आते हैं। कई मित्र ऐसे कई विषयों का निर्देश कर चुके हैं जिनका निर्देश करना मैं चाहता था।

श्रीमान, एक बात जो हमारे फेडरेशन को विशिष्टता प्रदान करती है वह यह है कि अन्य देशों के समान जिनमें फेडरेशन है किसी आक्रमण या किसी बाह्य अभिकरण के भय से हम फेडरेशन बनाने के लिये प्रेरित नहीं हुये हैं। डर के कारण हमारा फेडरेशन नहीं बना है। हमारा फेडरेशन स्वतन्त्रता के लिये वर्षों तक हमारे अनुपम संघर्ष का स्वाभाविक परिणाम है। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में हम एक संकल्प पारित करते रहते थे कि स्वतन्त्र भारत का अपना संविधान बनाने के लिये हमारी एक संविधान सभा होनी चाहिये अपेक्षाकृत इसके कि वह संविधान किसी बाह्य अभिकरण द्वारा या किसी प्रकार के भय की भावना द्वारा हमें लिखाया जाये। हमारे संविधान का विकास एक वैसी ही अनुपम रीति का स्वाभाविक परिणाम है

जैसी अनुपम रीति से हमने स्वाधीनता प्राप्त की है। हमारा अब एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न लोकतन्त्रात्मक गणराज्य है जो विदेशी सम्बन्धों को विनिश्चित करने के लिये और जिस रूप में हम चाहें उस रूप में अपना भाग्य निर्माण करने के लिये भी पूर्णतया स्वतन्त्र है।

इस संविधान के उपबंधों के सम्बन्ध में मैं प्रो. शाह से इस बात में सहमत नहीं हूं कि हमने अनेक निर्बंधनों से अपने मूलाधिकारों को ऐसा जकड़ दिया है कि उन निर्बन्धनों ने उन अधिकारों को लगभग प्रभावशून्य सा कर दिया है। कुछ वक्ताओं ने इस विषय का निर्देश किया है। श्रीमान, मेरा विश्वास है कि ये बड़े बहुमूल्य अधिकार हैं। जिनको हमने अपने नागरिकों के लिये सुनिश्चित किया है। हमने उनको न्याय्य बना दिया है। उनके आधार पर न्यायिक जांच पड़ताल हो सकती है। अनुच्छेद 13 में यह व्यवस्था है कि भारत में प्रवृत्त विधियां जहां तक मूलाधिकारों के अध्याय से असंगत है वहां तक वे एकदम रद्द हो जायेंगी। भविष्य में भी जो विधियां इन अधिकारों के विरुद्ध होंगी वे रद्द समझी जायेंगी। अतः मेरा विश्वास है कि यह अध्याय हमारे नागरिकों के लिये बड़े बहुमूल्य अधिकारों की व्यवस्था करता है। जैसा कि मेरे एक मित्र ने अभी कहा था इतिहास में प्रथम बार अपने नागरिकों के लिये ये अधिकार सुनिश्चित किये गये हैं।

हमने अपने सार्वजनिक जीवन के अभिशाप अस्पृश्यता को मिटा दिया है। हमने अपेक्षित लोगों की एक महान संख्या की अर्थात् जन-जातियों की हालत सुधारने का प्रयत्न किया है। हमें अपने आपको इस बात की बधाई देनी चाहिये कि हमने मूलाधिकारों को पूर्ण सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक समता प्रवृत्त करने या प्राप्त करने के साधन के रूप में भी दोनों अस्पृश्यों तथा जनजातियों और अन्य पददलित लोगों के लिये जनता के अन्य वर्गों के साथ समता की व्यवस्था की है। भाग-3 में, जो इन अधिकारों से सम्बन्ध रखता है, हमने एक अनुच्छेद रखा है जो संपत्ति के अनिवार्य अर्जन से सम्बन्ध रखता है। मुझे अच्छी तरह स्मरण है कि यह एक ऐसा अनुच्छेद है जिसके कारण संपत्तिवानों को बड़ी घोर चिन्ता हुई थी। इस अनुच्छेद पर कटु वादविवाद हुआ—और एक बार तो ऐसा प्रतीत हुआ कि हमारे इस झगड़े के कारण हमारा जहाज चट्टानों से टकरा कर चूर-चूर हो जायेगा पर अन्त में सद्भावना की विजय हुई और विचार विमर्श तथा वादविवाद द्वारा इस अनुच्छेद को यह रूप दिया गया और श्रीमान, मुझे विश्वास है कि हमने एक ऐसा हल निकाला है जिसके कारण संपत्तिवानों को कोई अनावश्यक शंका नहीं होनी चाहिये अपितु इसके कारण उनके मनों में विश्वास की भावना जाग्रत होनी चाहिये। मेरा ख्याल है कि स्वयं किसी संपत्ति का स्वामी न होने के कारण उनकी ओर से बोलने का मुझे हक नहीं है, पर यह स्पष्ट है कि हमारे जैसे राज्य को, जो सामाजिक न्याय और समता प्राप्त करने के सिद्धान्तों में दृढ़ विश्वास प्रकट करता है, लोकहित के लिये संपत्ति अर्जन करने के कुछ अधिकार रखने चाहिये और जब तक संपत्ति-स्वामियों की संपत्ति हरण नहीं करते, जब तक हम उनको यह निश्चित करने देते हैं कि राज्य जो प्रतिकार दे रहा है वह ठीक है या नहीं तब तक मैं नहीं समझता हूं कि उनके सशंकित होने के लिये कोई भी कारण हो।

इसके बाद श्रीमान, हमारे यहां निदेशक सिद्धान्त हैं और मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि एक निदेशक सिद्धान्त यह है कि यह राज्य का कर्तव्य है कि वह पोषण

[श्री बी.जी. खेर]

भरण के स्तर को उच्च करे और औषधीय प्रयोजनों के अतिरिक्त अन्य रूप में, उन मादक पेय-पदार्थों तथा भेषजों के प्रयोग का प्रतिषेध करने का प्रयास करे जो स्वास्थ्य के लिये हानिकर हैं। हम सब यह जानते हैं कि महात्मा गांधी के लिये यह कितनी चिन्ता का विषय था। स्वयं अपने प्रान्त के सम्बन्ध में मैं जानता हूं कि हमारी यह आलोचना की जाती है कि हमने बहुत जल्दी ही और उस सुधार को हाथ में ले लिया जिसका पुर:स्थापन करने में अन्य देश सफल नहीं हो पाये हैं। पर श्रीमान, मुझे यह देख कर बड़ा हर्ष हुआ है कि निदेशक सिद्धान्तों में यह एक बहुत ही आवश्यक निदेशक है कि इस देश के असंख्य लोगों के स्वास्थ्य और सुख की देख भाल राज्य द्वारा ही की जाये इसलिये उसका यह कर्तव्य होगा कि वह इस विषय के प्रयोग का प्रतिषेध करे। यह कहना व्यर्थ है कि हमने बहुत जल्दी की और मैं निवेदन करता हूं कि इस बात का निश्चय कि हमने जल्दी ही परिस्थितियों के आधार पर करना चाहिये। अपने प्रान्त के सम्बन्ध में मैं यह कहूंगा कि हमने सर्वप्रथम 1938 में प्रतिषेध का पुर:स्थापन किया। हमारे प्रान्त के एक भाग में प्रतिषेध था। इस समय हमने चार वर्ष दिये हैं अत: रूढ़िगत स्वार्थों में लिप्त व्यक्ति या वे व्यक्ति, जो इस बुरी आदत के शिकार हैं और जिसे वे छोड़ नहीं सकते हैं, हमारी या संविधान के इस भाग की जो व्यर्थ की आलोचना करते हैं वह आलोचना वास्तव में किसी प्रकार से न्यायपूर्ण नहीं है।

श्रीमान, यह भी कहा गया है कि इस संविधान का निर्माण करने के लिये हमने सन् 1935 के अधिनियम को ही आदर्श रूप में स्वीकार किया है। यद्यपि मैं यह नहीं समझ पाता हूं कि उसे आदर्श रूप में क्यों न स्वीकार किया जाये परन्तु फिर भी मैं यह बताना चाहता हूं कि वह एक ऐसा आदर्श रूप न था जो एक स्वाधीन सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न राज्य के लिये बनाया गया हो। उसे आदर्श रूप में उन भिन्न भिन्न राज्यों की एक संस्था बनाने के लिये व्यवस्था की गई थी जिनमें राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक स्थिति की समता का अभाव था। देशी राज्यों की समस्या को जिस रूप में हमने सुलझाया है उसके लिये धन्यवाद—सौ से लेकर कई करोड़ की जनसंख्या वाले 556 देशी राज्यों के स्थान में जिनको अब देशी राज्यों का अवशेष रूप कहा जा सकता है उनकी संख्या अब नौ रह गई है और यह सब अठारह महीने की अल्प अवधि के अन्तर्गत किया गया है। हमारे संविधान के मसौदे की प्रथम अनुसूची में केवल तीस एकक हैं जबकि भारत शासन अधिनियम 1935 में पन्द्रह प्रान्त और पांच सौ छप्पन देशी रियासतें हैं। अत: यद्यपि यह सही है कि हमने भारत शासन अधिनियम को यह देखने के लिये आदर्श माना है कि कोई महत्वपूर्ण प्रश्न, कोई महत्वपूर्ण समस्या, कोई महत्वपूर्ण मद ऐसे महत्वपूर्ण लेख्य के निर्माण करने में से रह न जाये, पर यह सत्य है कि 1935 के अधिनियम और सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न गणराज्य के इस संविधान में कोई समानता नहीं है जिस का इतनी सावधानी से परीक्षण कर, विचार विमर्श कर और पहले सोच समझ कर चार सौ अनुच्छेदों को बनाकर, हम निर्माण कर सके हैं। इसमें संदेह नहीं कि हमने तीन सूचियां स्वीकार की हैं जैसी कि 1935 के अधिनियम में हैं, पर हमने वर्तमान समय की व्यवहारिक आवश्यकताओं पर ध्यान दिया है। मैं यह जानता हूं कि सूचियों में रखे गये मदों

की अपेक्षित स्थिति के सम्बन्ध में बहुत असन्तोष है, पर यह कार्य संघ और प्रान्तों का है कि सुचारू रूप से कार्य संचालन करने के लिये कोई ऐसी रीति खोज निकाली जाये जिससे प्रान्तों की उन्नति को बनाये रखते हुए भी केन्द्र की शक्ति कम न हो।

श्रीमान, केन्द्र और राज्यों में वित्तीय सम्बन्ध वास्तव में एक बड़ी चिन्ता का विषय है, पर मुझे बड़ा हर्ष है कि सद्भावना के कारण हमने एक ऐसा सूत्र खोज लिया है। जिसको बड़ी उदारतापूर्वक दोनों प्रान्तों तथा केन्द्र ने स्वीकार कर लिया है। इसके प्रति हम शुभकामना की आशा करें।

एक और विषय जिसके लिये हमें गौरव करना चाहिये वह जिस रीति से हमने अल्पसंख्यक वर्गों की समस्या को सुलझाया है वह रीति है। हमारे मार्ग में वह एक बहुत बड़ा रोड़ा था। हमारे संविधान का भाग 16 हमारी रचनात्मक शैली का साक्षी है। अल्पसंख्यक वर्गों के भी हम बहुत कृतज्ञ हैं कि उन्होंने एक सुन्दर रीति से हमारे उन प्रयत्नों में साथ दिया है जो हमने पृथक निर्वाचन मिटाने के सम्बन्ध में किये थे और साथ ही साथ उनमें यह विश्वास की भावना प्रेरित करने के लिये थे कि उनके हितों की उपेक्षा नहीं की जायेगी।

भाषा के प्रश्न पर भी, जिसका यहां निर्देश किया गया है और जिस पर बहुत समय तक चर्चा हुई है, बहुत कटु वाद विवाद उत्पन्न हो गया था। श्रीमान, मैं आशा करता हूं कि एक वास्तविक राष्ट्र-भाषा के विकास करने का प्रयत्न किया जायेगा। नामों पर हमें झगड़ा करने की आवश्यकता नहीं है। मुझे विश्वास है कि हमारी लिपि बहुत ही समृद्ध तथा वैज्ञानिक है, और यद्यपि जो लोग इसे जानते नहीं हैं उनको सीखने में संभव है कुछ कठिनाई हो पर यदि वे एक बार इसे सीख जायेंगे तो यह अनुभव कर सकेंगे कि राष्ट्रभाषा के लिये इस लिपि को स्वीकार करने का हमारा विनिश्चय बहुत ही बुद्धिमत्तापूर्ण है।

इसके बाद श्रीमान, न्यायपालिका के विषय के बारे में मैं अधिक नहीं कहना चाहता हूं सिवा इसके कि केवल नारों के आधार पर हमें बहक नहीं जाना चाहिये। अधिकांश लोगों का ऐसा विचार प्रतीत होता है कि कार्यपालिका में सदैव ऐसे लोग होते हैं जो जनता की स्वतंत्रताओं का दमन करना चाहते हैं और न्यायपालिका उस साहसी योद्धा के समान हैं जो कार्यपालिका के चंगुल से जनता के स्वातंत्र्य को बचाती है। श्रीमान, मेरे विचार से यह धारणा बहुत ही गलत है और मुझे बड़ी खुशी है कि इस विषय पर हमारे संविधान में सहज तथा व्यवहारिक ज्ञान के विचार को अपनाया गया है। हमने न्यायपालिका के अधिकारों को सुनिश्चित किया है और कार्यपालिका की शक्तियों के लिये भी उपबन्ध बनाये हैं। आप इस सिद्धान्त को किस प्रकार स्वीकार कर सकते हैं कि कार्यपालिका में तो ऐसे ही व्यक्ति हों जो दुष्ट हों और जो केवल जनता की स्वतंत्रताओं का दमन करने के लिये चिंतित रहते हों और न्यायपालिका में केवल संत ही संत हों और यद्यपि मैं यह तो नहीं कहूंगा कि वे ऐसे संत हों जो शक्ति प्राप्त करने के सब विचारों से सर्वथा परे हों, हां, पर ऐसे हों जो उन भावनाओं में प्रवाहित न हों जिन में और लोग निश्चित रूप से प्रवाहित हो जायेंगे। मैं जानता हूं कि न्यायपालिका का निर्माण करना हमारे लिये एक बहुत कठिन कार्य है। न्यायाधीश बनने के लिये यदि वकील मंडल

[श्री बी.जी. खेर]

के सदस्यों को निमंत्रित किया जाये और वे इसे एक ऐसे कर्तव्य-पालन के निमंत्रण के रूप में न समझें जिसकी उपेक्षा नहीं की जानी चाहिये, क्योंकि न्यायासन पर आसीन न्यायाधीश उतना नहीं कमा सकता है जितना वकील-मंडल का एक वकील कमा सकता है, तो मुझे भय है कि शायद हम अच्छे न्यायाधीश प्राप्त न कर सकेंगे और उच्चतर पदों को प्रवर न्यायपालिका के न्यायाधीशों की पदोन्नति करके भरना पड़े। मुझे वास्तव में इस सम्भावना की आशंका है। चूंकि वकील के पेशे से मेरा 1909 से लेकर लगभग 40 वर्षों तक सम्बन्ध रहा है अत: परिस्थिति से अनभिज्ञ होकर मैं यह नहीं कहता हूं कि दोनों वकील-मंडल तथा न्यायाधीश गण को यह स्मरण कराने की आवश्यकता है कि वे भी नागरिक हैं और उन्हें जनता के अन्य वर्गों के दुखों में हाथ बंटाने के लिये उद्यत रहना चाहिये। मैं इस बात से सहमत हूं कि ऐसे परिमाण का होना आवश्यक है कि कार्यपालिका जनता के अधिकारों का अतिक्रमण न करे। कार्यपालिका और न्यायपालिका को पृथक करने से हम सहमत हो गये हैं परन्तु लोकतंत्र के आरम्भ में जिस बात की महान चिन्ता है वह है राज्य की प्रतिभूति। यह प्रतिभूति बहुत ही बहुमूल्य वस्तु है विशेष कर हमारे जैसे नवजात लोकतंत्र के लिये जहां नये विचार, नये सिद्धान्त, नये अधिकारों के प्रति धारणायें और स्थिति की समता जनता द्वारा कोई शनै: शनै: धारण नहीं की जा रही हैं। अत: वे लोग जो "नागरिक स्वातंत्र्य संकट में हैं" "कार्यपालिका द्वारा कष्ट" के नारे लगाते हैं उनके लिये यह अच्छा होगा कि वे इस बात को याद रखें कि वे इन नारों को तभी तक लगा सकते हैं और वे अपने नागरिक स्वातंत्र्य की तभी तक रक्षा कर सकते हैं जब तक कि अराजकता न होने पाये और कार्यपालिका कुशलता-पूर्वक, न्यायपूर्वक तथा समुचित रूप से कार्य करती रहे। *(वाह, वाह)*

श्रीमान भाषण समाप्त करने से पूर्ण इस महान कार्य के लिये, जिसे हम पूरा कर पाये हैं मुझे इस सभा को बधाई देनी चाहिये—और मैं इन तीन वर्षों के एक अधिक काल तक यहां सुख पूर्वक रहा। हममें से कुछ अपने निर्वाचनों में वयस्क मताधिकार पुर:स्थापन करने के परिणामों से घबराये हुए हैं। हमने एक बड़े साहस का कदम उठाया है। इसके लिए जिस परित्राण का मैं विचार कर सकता हूं वह सामाजिक शिक्षा की गति को बढ़ाता है। दूसरा परित्राण उत्तर सदन है। एक मित्र ने कहा था कि उत्तर सदन को हटा देना चाहिये। मैं उनके विचारों से सहमत नहीं हूं। कम से कम प्रथम दस वर्ष तक तो उत्तर सदन की नितान्त आवश्यकता है और मुझे खुशी है कि हमने जो विनिश्चय किये हैं उनसे उत्तर सदन की स्थिति असम्भव नहीं बना दी गई है। समता, स्वातंत्र्य तथा बन्धुता और सामाजिक न्याय के स्वप्न को पूरा करने की उत्सुकता में हम इस तथ्य को न भूल जायें कि इन महान बातों की प्राप्ति भी तभी संभव है जबकि अपने नव-जीवन के आरम्भ काल ही में हमारा क्षय न हो और अज्ञानता अथवा दुष्टता के कारण इस समस्त यंत्र का विध्वंस न हो। ऐसे राजनैतिक पक्ष हैं जो देश में उपद्रव पैदा करना चाहते हैं क्योंकि उनका विश्वास है कि केवल इसी ढंग से और केवल हिंसा द्वारा ही वे अपने स्वप्नों को पूरा कर सकते हैं। राष्ट्रपिता ने इसके विपरीत सोचा और इसके विपरीत शिक्षा दी और हमने उनके पद चिन्हों का अनुसरण किया और हमें उसका परिणाम बड़ा सुखद मिला और यही तथ्य—कि हम इस संविधान को इतना

शीघ्र बना सके–मैं इसे 'शीघ्र' ही कहता हूं– और इतनी शान्तिपूर्ण नीति से बना सके—इस बात के कारण हैं कि हमने उन्हें अपना मार्गदर्शक तथा नेता समझा। कुछ भी हो, श्रीमान, यह एक यशपूर्ण संकट है जिसे हमने अपने ऊपर लिया है—उस साधारण जन को भाग्य सौंपते हुए जिसके सुख और जिसकी उन्नति के लिये यह संविधान है और इस संविधान का निर्माण किया गया है।

एक बार फिर मैं इस सभा को बधाई देता हूं, और मुझे इस बात में सन्देह नहीं है कि हमने एक ऐसा काम किया है जो इस बात को निश्चित करेगा कि जिस सामाजिक न्याय, शान्ति, उन्नति तथा सम्पन्नता को प्राप्त करने का हमारा उद्देश्य था वे भारत को प्राप्त होंगे। *(तालियों की घोर ध्वनि)*

***अध्यक्ष:** सभा स्थगित करने से पूर्व मैं सदस्यों को यह सूचित करना चाहता हूं कि कल जिस अनुमान को लेकर मैं आगे बढ़ा था वह गलत निकला। मैं इस आधार पर आगे बढ़ा था कि वक्ताओं की संख्या 72 होगी जिनके नाम मुझे कल प्रात:काल तक प्राप्त हो चुके थे। उस समय से अब तक इस सूची में नामों की संख्या बढ़कर 125 हो गई है और संभव है, कि इस सप्ताह के शुक्रवार तक, जिस दिन कि हम समाप्त करना चाहते हैं, इस सूची में इस सभा के सब सदस्यों की संख्या आ जाये। इस कारण न तो केवल तीन घंटे प्रति दिवस बैठना संभव है और न यह ही संभव है कि प्रति वक्ता को 20 मिनट दिये जायें। अत: मेरा यह विचार है कि आज से आगे हम सुबह और दोपहर बाद, दस से एक तक और तीन से पांच तक, दोनों समय समवेत हों, और वक्ताओं से मैं यह आशा करूंगा कि वे इस सप्ताह में तो 15 मिनट अपने भाषण में लगायें और आगामी सप्ताह में शायद यह घटा कर 10 मिनट कर दिया जायेगा। आज दोपहर बाद से प्रत्येक वक्ता के लिये 15 मिनट का समय होगा और प्रत्येक दिन हम दस से एक और तीन से पांच तक समवेत हों।

सभा तीन बजे तक स्थगित हुई।

इसके बाद सभा दोपहर के भोजन के लिये दोपहर बाद के तीन बजे तक के लिये स्थगित हुई।

सभा दोपहर के भोजन के बाद तीन बजे अध्यक्ष महोदय माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में समवेत हुई।

***अध्यक्ष:** हम अब चर्चा आरम्भ करेंगे।

***श्री प्रभुदयाल हिम्मतसिंहका** (पश्चिमी बंगाल: जनरल): अध्यक्ष महोदय, कई माननीय सदस्य भाषण दे चुके हैं, और संविधान के मसौदे में अपने अपने विचारों के अनुसार अच्छी और बुरी बातें बता चुके हैं। माननीय श्री अनन्तशयनम् आयंगार तथा माननीय श्री गाडगिल ने बड़े विशद रूप में उपबन्धों का विश्लेषण किया है और सभा को यह बताया कि जिस अवधि में यह संविधान सभा इस संविधान को बनाती रही उस अवधि के अन्तर्गत इस संविधान में हमने क्या कार्य पूरे किये हैं। कुछ उपबंधों के प्रति संभव है कुछ मतभेद हो सकता है। कुछ

[श्री प्रभुदयाल हिम्मतसिंहका]

लोग कुछ उपबंधों को कल्याणकारी समझें और कुछ लोग उन्हीं उपबंधों को आपत्तिजनक समझें। परन्तु श्रीमान, इस बात पर बहुत कुछ निर्भर करता है कि इन उपबंधों को किस प्रकार कार्यान्वित किया जायेगा तथा यह भी कि जनता कितनी सचेष्ट है। यदि हम सब सचेष्ट हैं तो संविधान के उपबंधों में चाहे जो कुछ भी हो, सारी बातें ठीक होंगी। ऐसे व्यक्ति हैं जो उन शक्तियों पर आपत्ति करते हैं जो 257, 358 और 365 जैसे तथा अन्य अनुच्छेदों के उपबंधों द्वारा केन्द्र को दी गई हैं। लोग 371 अनुच्छेद पर आपत्ति करते हैं जो राज्यों पर अधीक्षण रखने और उनको निदेश देने की शक्ति केन्द्र को देता है। पर जो राज्यों की हालतों से परिचित हैं वे वास्तव में केन्द्र को और भी अधिक व्यापक शक्तियां देने का स्वागत करेंगे। राजस्थान में क्या हो रहा है। लोगों को उनके घरों से उठा लिया जाता है और उनको मुक्त करने के लिये धन लिया जाता है। यदि राजस्थान के प्राधिकारी सख्ती करने या कदम उठाने में समर्थ नहीं हैं तो यह निश्चय ही उनके हित की बात होगी कि केन्द्र निदेश दे और उन निदेशों का पालन किया जाये और यदि पालन न हो तो केन्द्र शासन भार ले ले और प्रबन्ध करे। कुछ स्थानों में सायंकाल के 6 बजे बाद लोगों का घूमना फिरना असंभव हो गया है और लोग घर के भीतर रहना पसंद करते हैं। यदि ऐसी घटनायें होतीं हैं तो आप यह कल्पना नहीं कर सकते हैं कि किस प्रकार की सहायता या किस प्रकार हस्तक्षेप आवश्यक होगा। आखिर सब शक्तियों का प्रयोग आपात की दशा में ही होगा और अपनी ओर से यह धारणा कर लेना गलत होगा कि केन्द्र इन शक्तियों का प्रयोग करेगा ही—वह तो केवल तभी प्रयोग करेगा जब कि उनका प्रयोग करना नितान्त आवश्यक होगा। जो कार्यपालिका इन शक्तियों का प्रयोग करेगी वह कोई अदमनीय या न हटाई जा सकने वाली कार्यपालिका नहीं है। यदि वह गलत प्रयोग करती है तो सभा के सदस्य उसको हटा सकते हैं और मैं नहीं समझता हूं कि हम इस समय की वस्तुस्थिति की तुलना भारत के स्वतन्त्र होने से पूर्व की वस्तुस्थिति से करें जब कि कार्यपालिका न हटाई जा सकती थी और न सभा को उसे हटाने की कोई शक्ति थी। कुछ ऐसे उपबंध हैं जिनके बारे में मिथ्या धारणायें फैली हुई हैं। जनता के कुछ वर्ग यह कहते हैं कि यह वयस्क मताधिकार एक शुभ वस्तु है यह प्रत्येक व्यक्ति को 16 आने लोकतन्त्र प्रदान करता है और प्रत्येक स्त्री या पुरुष सरकार पर अपना प्रभाव जमा सकेगा। कुछ लोग समझते हैं कि 90 प्रतिशत निरक्षरता से मुक्त यह शत प्रतिशत लोकतंत्र एक संकटजनक प्रयोग होगा और इस विषय में हमें सावधानी से आगे बढ़ना चाहिये था। लोग यह विचार कर कांपते हैं कि कोई व्यक्ति जो निरक्षर है और अभी तक मतों का मूल्य नहीं समझता है यदि वह अपने मत का गलत प्रयोग करेगा तो क्या होगा। पर वयस्क मताधिकार दिया गया है, क्योंकि वयस्क मताधिकार के समर्थक होते हुए नेताओं के लिये यह असंभव हो गया है कि वे यह कहें कि वे उसे नहीं चाहते। मैं जानता हूं कि कई नेता वयस्क मताधिकार को अच्छा नहीं समझते पर उन्हें ऐसा कहने का साहस नहीं होता।

कई प्रान्तों में वर्तमान वस्तुस्थिति के कारण भी केन्द्र के लिये शक्तियां आवश्यक हो गई हैं। जो प्रान्तीय सरकारों तथा केन्द्र के कार्यों का पक्ष-समर्थन करने वाले हैं वे ही लोग सरकार के सर्वोच्च आसन पर विराजमान हैं। कांग्रेसियों का एक दल

कांग्रेसियों के दूसरे दल से लड़ रहा है—जो लोग सरकार से बाहर हैं वे केवल इस कारण सरकार की शक्ति कम करना चाहते हैं कि वे दूसरे दल के हैं। लगभग सब प्रान्तों में यही हो रहा है और जिस दिन भी आप समाचार पत्रों को खोलें आपको यही समाचार मिलेगा। यह एक वैयक्तिक ईर्ष्या तथा झगड़े का प्रश्न हो गया है। यदि विरोध करने के लिये कोई भी बात न हो तो भी चूंकि शक्ति हमारे हाथ में नहीं है वह दूसरे के हाथ में है हम शिकायत करते हैं और वहां दोष निकालते हैं जहां दोष है ही नहीं। इस प्रकार कांग्रेसी सरकार जन साधारण की दृष्टि में घृणित बनाई जा रही है और इसी कारण यदि हम वास्तव में कांग्रेस तथा सरकार की स्थिति में सुधार करना चाहते हैं तो इस दुर्गन्ध को निकाल देना चाहिये। पर अभी मुझे ऐसे कोई लक्षण नहीं दिखाई देते हैं। और अधिकांश प्रान्तों में यही दुखप्रद कहानी गढ़ी जाती है और प्रत्यक्ष देखी जाती है। अत: यह आवश्यक है कि कुछ ऐसे उपबन्ध होने चाहिये जिनका जब शासन भंग होने की संभावनायें प्रतीत हों तो उपयोग हो सके। अब भी आप यह देखते हैं कि जब केन्द्र के मन्त्री कोई बात कहते हैं तो कुछ प्रान्तीय मंत्री ऐसे कथन निकाल देते हैं जो केन्द्र की नीति के पूर्णतया विरुद्ध होते हैं। केन्द्रीय सरकार कहती है "हम चाहते हैं कि कपास पैदा किया जाये।" बम्बई के एक मंत्री कहते हैं "हम तब तक ऐसा नहीं करेंगे जब तक कि केन्द्रीय सरकार हमें खाद्य-पदार्थों के प्रदाय का आश्वासन न देगी" मानो कि केन्द्र द्वारा खाद्य-पदार्थ दिये ही न जाते हों और बिना उस आश्वासन के खाद्य-पदार्थ भेजे ही न जायेंगे। केन्द्रीय सरकार और प्रान्तीय सरकारों में परस्पर संयोग होना चाहिये। अन्यथा शासन चलाना लगभग असंभव सा हो जायेगा और यह कार्य बहुत कठिन हो जायेगा।

श्रीमान, इस बात पर बहुत कुछ निर्भर करेगा कि संविधान किस प्रकार कार्यान्वित होगा और कौन व्यक्ति उसे कार्यान्वित करेगा। यदि आप किसी कार्य का भार 'क' व्यक्ति पर डालते हैं तो संभव है कि वह उसे बड़ी सफलतापूर्वक कर सके परन्तु यदि आप 'क' के स्थान में कोई अन्य व्यक्ति रखें तो यद्यपि इस तथ्य के होते हुए भी कि उसे वही साधन प्राप्त होंगे वह सब गड़बड़ कर दे। इस बात पर बहुत अधिक निर्भर करता है कि संविधान किस प्रकार कार्यान्वित होता है, कौन कार्यान्वित करता है और किस नीति से कार्यान्वित किया जाता है। लोग सदैव दोष निकालते रहेंगे पर यह संविधान बहुत ही संतोषजनक संविधान है और यदि इसको ठीक रूप से कार्यान्वित किया जाता है और जो लोग सहारा दे सकते हैं उन लोगों द्वारा ठीक सहारा मिल जाता है तो मैं समझता हूं कि काम संतोषजनक रीति से होंगे। कुछ लोग यह कहते हैं कि कुछ मूलाधिकार और भी अधिक व्यापक होने चाहिये थे। मेरी इच्छा है कि मूलाधिकारों के साथ साथ कुछ मूल कर्तव्य भी होते। यदि हम अपने अधिकारों की अपेक्षा अपने कर्तव्य का अधिक विचार करें तो हमारी बहुत-सी कठिनाइयां दूर हो जायें और अधिकार अपने आप मिल जायें और उन अधिकारों के अभाव के कारण कठिनाइयां अनुभव करने का अवसर ही न मिले।

***श्री एच.वी. पातस्कर:** (बम्बई: जनरल): अध्यक्ष महोदय, लगभग तीन वर्ष के अन्त में हम अपना विचार विमर्श समाप्त करने की स्थिति में हैं। वर्तमान संविधान के कुछ पहलुओं की चर्चा करने से पूर्व जिस रीति का हम पालन कर चुके हैं

[श्री एच.वी. पातस्कर]

उसका मैं बहुत संक्षेप में वर्णन करना चाहूंगा। जब हमने सर्वप्रथम यह कार्य आरम्भ किया था हमारा निकाय केवल संविधान निर्माण करने वाला निकाय था और उस समय भारत अविभाजित था और अखंड रूप में था। जब हम प्रथम बार यहां समवेत हुए थे सदस्यों का एक ऐसा भी वर्ग था जिसका इस सभा के लिये निर्वाचन हुआ था और वे सदस्य हम से संयोग नहीं रखते थे। इस समय अपने अधिवेशन के पांचवें दिन लक्ष्यमूलक संकल्प प्रथम बार पेश किया गया जिसका भारत स्वतंत्रता का आदेश-पत्र के रूप में ठीक वर्णन किया गया है। वह संकल्प 13 दिसम्बर 1946 को पेश किया गया था और 22 जनवरी 1947 को सर्वसम्मति से पारित किया गया था। मैं सभा का ध्यान उन तीन बातों की ओर आकर्षित करना चाहूंगा जो उस संकल्प में थीं। सर्वप्रथम उसमें यह निर्धारित किया गया था कि भारत एक स्वाधीन संपूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न गणराज्य होगा। दूसरी बात यह है कि भारत एक संघ या फेडरेशन होगा और उस फेडरेशन में अपनी वर्तमान सीमाओं सहित तथा ऐसी अन्य सीमाओं सहित जो संविधान सभा द्वारा विनिश्चित की जायें राज्य-क्षेत्र होंगे और ये राज्य-क्षेत्र अवशिष्ट शक्तियों सहति न्यूनाधिक रूप में स्वायत्तशासी एकक होंगे, और सिवा उन शक्तियों और कृत्यों के जो केन्द्र को सौंपे जायें या सौंपे जायेंगे ये एकक सरकार और प्रशासन की सब शक्तियों और कृत्यों का प्रयोग करेंगे। श्रीमान, उससे यह स्पष्ट प्रकट होता है कि उस समय जो कुछ हमने चाहा था वह भारत के उन कई राज्यों-क्षेत्रों या राज्य-क्षेत्रों के भागों का एक प्रकार का फेडरेशन था जिनका स्वायत्तशासी या अर्द्ध स्वायत्त-शासी एककों में निर्माण होने वाला था। उस संकल्प से पारित हो जाने के पश्चात् कई समितियां बनाई गईं और उनमें से एक सबसे अधिक महत्वपूर्ण समिति संघीय शक्ति समिति थी जिसने अपना प्रतिवेदन 4 जुलाई 1947 को प्रकाशित किया था। वह प्रतिवेदन मई 1947 में तैयार हो गया था। श्रीमान, उस प्रतिवेदन में, आप यह देखेंगे कि उसके सर्वप्रथम खंड में यह कहा गया है कि फेडरेशन भारत नाम से ज्ञात एक स्वाधीन गणराज्य होगा। इसका यह अर्थ है कि अब तक यही विचार था कि भारत इन एककों का फेडरेशन होगा। जैसा कि मैं पहले कह चुका हूं उस समय सर्वसम्मत्ति यह थी कि हम जो निर्माण करना चाहते थे वह कई राज्यों का एक पूर्ण, शुद्ध फेडरेशन था। पर इसी समय में कई घटनायें हुईं। 15 अगस्त 1947 को भारत की जनता को शक्ति हस्तान्तरित की गई और उसी समय भारत का विभाजन भी हुआ। यह हमारे कार्य आरम्भ करने के पश्चात् और भारतीय स्वतंत्रता के आदेश-पत्र के नाम से ज्ञात संकल्प को पारित करने के पश्चात् हुआ। इसके पश्चात् श्रीमान, जैसा कि हम सब को भली प्रकार विदित है विभाजन के बाद कई दुखद घटनायें हुईं और केवल हमारे नेताओं पर ही नहीं वरन् संविधान सभा पर भी भारी उत्तरदायित्व लादा गया जो भारत स्वाधीनता अधिनियम के अधीन दोनों संविधान निर्माता निकाय के रूप में तथा केन्द्रीय संसद के रूप में भी कार्य करने लगी। यदि ये घटनायें न होतीं तो शायद एककों का एक वैज्ञानिक व्यवस्थानुसार, पूर्ण फेडरेशन बनाने की अपनी मूल योजना पर हम जमे रहते। पर इन घटनाओं और संविधान निर्माण करने के कार्य ने मिल कर हमारे दृष्टिकोण पर प्रभाव डाला जो उस समय तक तो पूर्ववत ही था और हमारे कार्य के कई पहलुओं पर भी प्रभाव डाला। इस काल में इन विरोधी घटनाओं के यकायक होने से कुछ सीमा तक हमारी दृष्टि धुंधली हो गई। एक शक्तिशाली केन्द्रीय सरकार एक दम एक प्रमुख विषय बन गया। मैं यह कहने

में अन्तिम वक्ता सहित किसी से पीछे नहीं हूं कि एक दृढ़ केन्द्रीय सरकार की निस्सन्देह आवश्यकता है। पर यह देखना होगा कि इसका क्या अभिप्राय है। राज्यों की समस्याओं को दृष्टि में रखते हुए जिनको जाने वाले अंग्रेज प्राधिकारियों द्वारा अस्वाभाविक दशा में छोड़ा गया था हमारा कार्य और भी अधिक जटिल हो गया और स्वयं पाकिस्तान की उत्पत्ति ही ने बहुत सी कठिनाइयां पैदा कर दी हैं। पाकिस्तान के भूत ने, जो भारत के ही शरीर से पैदा हुआ था, भारत के तीन टुकड़े कर दिये और उसी पर उन निर्दोष हत्याओं का उत्तरदायित्व है जिसका उदाहरण मानव इतिहास में नहीं है और इसके कारण हम शेष भारत में कभी भी कोई भाग रखने के विचार मात्र से कांपने लगे। इसके कारण उस समस्या के प्रति हमारे दृष्टिकोण में परिवर्तन हो गया जो हमारे सम्मुख थी। यदि हम उन बातों पर ध्यान दें जिनको हम सदा विचारते आये थे तो हम यह देखेंगे कि पहले हम शुद्ध रूप में फेडरल संविधान बनाने का प्रयास करने में संलग्न थे, पर अन्तर्कालीन घटनाओं, विभाजन की दुख:पूर्ण घटना और बाद में जो घटनायें हुई उन्होंने हमारे प्रथम स्वाधीनता के आदेश पत्र में परिवर्तन करने के लिये हमें विवश किया और जो लक्ष्य हमने अपने सामने निश्चित किया था उससे अपने आपको हटा लेने के लिये विवश किया। और ये सब बातें इस तथ्य के कारण हुईं कि हम एक ऐसे केन्द्र को रखने के विचार से प्रभावित हो गये जो शक्तिशाली हो। इस सम्बन्ध में मैं यहां यह कहना चाहूंगा कि प्रत्यक व्यक्ति यह चाहता है कि विश्व की घटनाओं का जो रूप इस समय है उसके अनुसार हम देश में एक शक्तिशाली सरकार चाहते हैं। इस सरकार के 'शक्तिशाली' होने का क्या अर्थ है? 15 अगस्त 1947 को शक्ति उस जनता को दे दी गई थी जो कई बातों में आपस में मतभेद रखती थी। कम से कम 15 अगस्त तक हम यह सोचते थे कि प्रशासन का उपयुक्त रूप केवल फैडरल ही हो सकता है जिसमें जनता के इन वृहद समुदायों द्वारा निर्मित उपयुक्त एकक हों। पर जैसा कि मैं कह चुका हूं कि जो घटनायें हुईं उनके कारण हमारे दृष्टिकोण में परिवर्तन हो गया। इस नई शक्तिशाली रचना का हम किस प्रकार निर्माण करें? हमें जनता को एक-एक प्रकार के पृथक-पृथक शक्तिशाली एककों में बांटना है। अथवा क्या केन्द्रीय प्रशासन का एक उस रूप में यकायक परिवर्तन करना संभव हो सकता है जिस रूप की एक केन्द्रीय सरकार अंग्रेजी सरकार जैसी किसी विदेशी सरकार द्वारा आरोपित की जा सकती थी? हमें इन एककों का निर्माण करना है और एक शक्तिशाली केन्द्र के निर्माण करने में हमें एककों का ऐसा निर्माण करना चाहिये कि वे स्वयं शक्तिशाली हों। जब तक एकक शक्तिशाली नहीं होंगे तब तक फेडरेशन कभी भी शक्तिशाली नहीं हो सकता है। और मैं तो यही कहूंगा कि द्वितीय पठन के समय हम में भय की भावना पैदा हो गई। यह हो सकता है कि हमारे ही देश में जो घटनायें हुईं उन के आधार पर तथा बाहर की घटनाओं के भी आधार पर इसको ठीक समझा गया था। जनता में निरक्षरता के कारण वयस्क मताधिकार पर भी भिन्न रूप से विचार किया जाता था। पर इस निरक्षरता से तो सब पहले से ही परिचित हैं और इस बात से भी परिचित हैं कि यद्यपि हम इस निरक्षरता को अल्पकाल में हटाना चाहते हैं पर वह हटाई नहीं जा सकती है। अत: वयस्क मताधिकार को केवल एक गंभीर संदेहयुक्त विषय के रूप में ही नहीं वरन एक घोर संकट के विषय के रूप में समझा जाने लगा। इसका परिणाम यह हुआ कि राज्यों का स्वायत: शासन का अर्द्ध-स्वायत्त शासन राष्ट्र संकट का एक विषय समझा जाने लगा। हमने फैडरेशन

[श्री एच.वी. पातस्कर]

का रूप तो रखा परन्तु उस फैडरेशन का सार या विषय बदल दिया। एक फैडरेशन रखने के विचार से ही हम प्रांत संज्ञा के स्थान में राज्य संज्ञा रखने लगे। यदि आरम्भ से वर्तमान विचार रहता तो हम यह परिवर्तन कदापि नहीं करते। परन्तु यद्यपि 'राज्य' संज्ञा तो है पर राज्य की शक्ति इतनी कम कर दी गई है कि उसको अब 'राज्य' कहना गलत है। यदि हम ऐसा ही चाहते थे तो एकात्मक प्रणाली की सरकार रखना कहीं अधिक अच्छा होता। उस दशा में इस समूची रचना का निर्माण भिन्न प्रकार से होता।

इन बातों से भयभीत हो जाने के परिणामस्वरूप मैं देखता हूं कि निम्नलिखित परिवर्तन इस संविधान के निर्माण में हो गये हैं। निर्वाचित राज्यपाल के स्थान में राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त राज्यपाल हो गया। अवशिष्ट शक्तियां जो यदि संविधान वास्तव में फैडरल होता तो राज्यों को होनी चाहिये थी वे संघ को दे दी गई हैं। उसकी तो धारणा ही गलत है। मैं यह समझ सकता हूं कि एक एकात्मक शासन पद्धति में अवशिष्ट शक्तियां संघ के पास होंगी क्योंकि शक्तियों की उत्पत्ति केन्द्र से है। पर एक फैडरल संविधान में शक्तियां वास्तव में एककों से उत्पन्न होती हैं और अवशिष्ट शक्तियां उनके पास ही रह सकती हैं। और फिर, श्रीमान, एक और आश्चर्यजनक बात हुई। प्रथम पठन में हमने यह विनिश्चित किया कि राज्यों में निर्वाचन जैसा साधारण विषय स्वयं राज्यों द्वारा नियंत्रित होना चाहिये। पर अब हमने एक ऐसा उपबंध रखा है कि उन पर केन्द्र द्वारा भी नियंत्रण हो (अनुच्छेद 324)। और फिर उन विषयों पर भी विधान बनाने की शक्ति केन्द्र को दे दी जो राज्य-सूची में रखे गये हैं। वित्त सम्बन्ध में भी राज्य न्यूनाधिक रूप से केन्द्र की दया पर आश्रित हैं। वे अपनी अधिकांश आय केन्द्र से प्राप्त करेंगे और उनको अपने निजी आय के साधन बहुत ही कम दिये गये हैं। राज्यपाल अब केवल संविधानिक मुखिया ही नहीं है वरन मंत्रालयों के कार्यों में हस्तक्षेप करने की शक्ति उसे दी गई है। इस सम्बन्ध में मैं केवल अनुच्छेद 167 का उल्लेख करूंगा। एक शक्तिशाली केन्द्र रखने के विचार से बहुत सी ऐसी समस्यायें भविष्य के लिये छोड़ दी गई हैं जिनका हल करना नितान्त आवश्यक था और ऐसा प्रतीत होता है कि मानों हम पुराने अधिनियम को जारी रख रहे हैं।

मैं जानता हूं कि कठिनाइयां बहुत सी हैं। हमारा देश ऐसा है कि इसमें प्रवेश प्रगति के भिन्न-भिन्न स्तर पर हैं। हमारे देश में कई भाषायें हैं। एक शताब्दि से अधिक काल तक अंग्रेजी साम्राज्य के अधीन रहने के फलस्वरूप हममें बहुत सी कमियां भी आ गई हैं। देश की वर्तमान दशा गभीर चिन्ता पैदा करने वाली है और देश से बाहर संसार की दशा भी कोई कम संकट-जनक नहीं है। पूर्व अपनी प्रगाढ़ निद्रा से जाग रहा है और दबी हुई स्थिति से ऊपर उठ रहा है। इन सब बातों को मानते हुए भी हम एक ऐसा समुचित लोकतंत्रात्मक संविधान नहीं बना सकते हैं। जो उस जनता के प्रति सामान्यतया तथा उस जनसाधारण के प्रति अपने कुछ भागों में अविश्वास प्रकट करे जो एक लोकतंत्रात्मक राज्य की एकमात्र आधारशिला हो सकते हैं। श्रीमान, इस प्रकार के एक शक्तिशाली केन्द्र के प्रति

मेरी यह आपत्ति है। हां, यह सत्य है कि केन्द्र को शक्तिशाली बनाने के लिये हम उसे सब शक्तियां दे सकते हैं। पर यह केन्द्र प्राचीन काल के केन्द्र नहीं है जिसके लिये शक्तियों का प्रवाह बाहर से अर्थात् अंग्रेजी सत्ता से होता था। इस केन्द्र को शक्तियां राज्यों से प्राप्त होनी चाहिये जिन को सर्वप्रथम शक्तिशाली तथा दृढ़ बनाना चाहिये। जब तक एकक शक्तिशाली नहीं होंगे तब तक आप एक ऐसा फैडरेशन किस प्रकार रख सकते हैं जो शक्तिशाली हो।

श्रीमान, इस संविधान-निर्माण कार्य के आरम्भ करने और इसको समाप्त करने तक के समय में ऐसी बहुत सी बातें हुई हैं जिनके कारण हमारी बुद्धि मलिन हो गई है और इसका परिणाम यह हुआ है कि हम एक शक्तिशाली केन्द्र के विचार को लेकर दौड़ लगा रहे हैं। और कदाचित अबोध, अजान तथा अप्रतिहत होकर अपने आपको उस ओर ले जा रहे हैं जिस ओर संभव है कि सफलता न मिले। यदि हम अपने विचार और कर्म की धारा की उलझन को स्पष्ट रूप से समझ गये हैं तो उसका आशय यह है कि हमारा यह मत है कि समस्त जनता-जनसाधारण, एक लोकतंत्रात्मक फैडरेशन के नागरिक के रूप में अपने अधिकारों का ठीक-ठीक प्रयोग करने की सामर्थ्य नहीं रखती है। इस दशा में सर्वोत्तम मार्ग यही है कि फैडरेशन के विचार को पूर्ण तिलांजली दे दी जाती और एकात्मक शासन पद्धति का संविधान बनाया जाता है। इस बात को मैं समझ सकता था। उस समय हम यह कह सकते थे, "हम फैडरेशन के पक्ष में नहीं हैं; इस देश के लिये हम एकात्मक शासन पद्धति चाहते हैं।" पर ऐसा हमने नहीं किया। और फिर यदि हम यह समझते हैं कि कुछ वर्षों तक हमारी जनता निरक्षर रहेगी और इस समय में वह निरक्षरता मिट जायेगी जो हमारे लोकतंत्र के लिये एक अभिशाप है तो हम यह कह सकते थे "ठीक है, हमारी जनता पन्द्रह या बीस वर्ष बाद फैडरल शासन पद्धति के लिये तैयार हो जायेगी।" उस दशा में हमें एक संक्रांति कालीन संविधान बनाकर संतुष्ट हो जाना चाहिये था और अन्तिम संविधान बनाने के लिए कार्य को उन लोगों पर छोड़ देना चाहिये था जो हमारे बाद आयेंगे। पर यह वर्तमान संविधान यद्यपि एक संघ के नाम से ज्ञात है परन्तु सार रूप में यह फेडरल नहीं है—फैडरेशन शब्द का लोप हो गया है और उसके स्थान में 'संघ' शब्द आ गया है। मैं किसी पक्ष या किसी जन-समूह को दोष नहीं देना चाहता हूं पर उन परिस्थितियों और घटनाओं के परिणामस्वरूप, जिनमें से कुछ तो हमारे नियंत्रण से बाहर हैं, यह पूरा का पूरा संविधान दोनों फैडरल तथा एकात्मक पद्धति के संविधानों से असंबद्ध भागों का एक अनोखा समिश्रण है। मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि जो कुछ मैं यह कह रहा हूं उससे मैं मसौदा समिति के मत्थे कोई दोष मढ़ना नहीं चाहता हूं। मैं उन कारणों की व्याख्या करने का प्रयास कर रहा हूं जिनसे यह परिणाम निकला।

इसके पश्चात्, श्रीमान, इस संविधान का एक और पहलू भी है। मैं जानता हूं कि हम एक कोरे कागज़ पर नहीं लिख रहे थे, ब्रिटिश साम्राज्य से हमारे पूर्व-सम्बन्ध थे और उस साम्राज्य के अधीन सौ वर्ष से अधिक काल तक हम रहे थे। वह हम पर शासन करता था और भारत शासन अधिनियम 1935 लागू था। भारत शासन अधिनियम क्या था? वह इगलैंड के अलिखित संविधान के कुछ

[श्री एच.वी. पातस्कर]

सिद्धान्तों का अनुकूलन मात्र था और जिस रूप में भारत उस समय अधीन था उस अधीनता के लिये वह अनुकूलित किया गया था तथा उपयुक्त बनाया गया था। यह स्पष्ट है कि वह स्वतन्त्र भारत के संविधान का एक बहुत ही उपयुक्त आधार नहीं हो सकता था। और फिर, उसकी हर एक बात बुरी नहीं थी। पर हुआ यह कि हमारा संविधान बड़ा विशाल हो गया क्योंकि हमने न्यूनाधिक रूप से अपने संविधान को उस अधिनियम पर आधृत किया। भारत शासन अधिनियम में 328 धारायें और आठ अनुसूचियां थीं, वर्तमान संविधान में, 395 अनुच्छेद और आठ अनुसूचियां हैं। 1935 के अधिनियम में रखे हुए उपबन्धों का हमने बहुत कुछ अनुसरण किया है। इस तथ्य को छिपाने का प्रयास करने में कोई लाभ नहीं है कि हमने अपने संविधान का आधार इगलैंड के उस अलिखित संविधान को बनाया है जो 1935 जैसी भारत की अधीनता के लिये अनुकूलित किया गया था। यह वांछनीय नहीं है कि संविधान इतना विशाल हो। हमने संविधान में उन बातों को रखने का प्रयास किया है जो देश के वर्तमान या भावी विधान का अंग होती। निर्वाचनों का समस्त अध्याय कनाडा की संसद के एक अधिनियम पर आधृत है और वह अधिनियम कनाडा के संविधान का अंग नहीं है। अत: इस विषय को देश के वर्तमान या भावी विधान में स्थान मिल सकता था। दुर्भाग्यवश इन सब बातों को संविधान में रखने का इस कारण प्रयास होता रहा कि विधान मंडल के अधिनियम और संविधान के उपबन्ध के अन्तर को हम अपने मन में स्पष्ट नहीं कर सके।

हमारे मूलाधिकार बहुत अच्छे तथा व्यापक हैं, पर एक परिवर्तन से मैं खुश नहीं हूं जो वैयक्तिक स्वातंत्र्य के सम्बन्ध में किया गया है। जहां तक मेरा सम्बन्ध है मैं यह नहीं समझ सका हूं कि केवल एक उस पदावली के कारण जिसे हम नहीं रखना चाहते थे हमें 21 और 22 अनुच्छेदों को क्यों पुर:स्थापन करना पड़ा। प्रसिद्ध 'विधि की उचित प्रक्रिया" से बचने के लिये हमने अनुच्छेद 21 में "विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया" पदावली रखी। उस कठिनाई से मुक्त होने के लिये हमने अनुच्छेद 22 का पुर:स्थापन किया। फिर भी जिस प्रयोजन के लिये वह पुर:स्थापित किया गया है उसकी वह पूर्ति नहीं करेगा।

अभी उस दिन डॉ. अम्बेडकर ने हमें यह बताया था कि खंड (4) में उपबन्ध कर दिया गया है जिसके द्वारा परामर्शदात्री मंडलियां नियुक्त होंगी जिनके समक्ष ये विषय रखे जा सकेंगे परामर्शदात्री मंडलियां न्यायाधिक रूप में कार्यपालिका द्वारा ही नियुक्त की जायेंगी। और सुदूर भविष्य के सम्बन्ध में सोचते हुए—संभव है हम यहां रहें या न रहें और अन्य लोग हमारा स्थान ग्रहण करलें पर यह तथ्य बना रहेगा कि परामर्शदायी समितियां तत्कालीन कार्यपालिका की ही मंडलियां होंगी, अत: उनके इतने स्वाधीन होने की आशा नहीं की जा सकती जितनी न्यायपालिका हो सकती है। मुझे विदित हुआ है हम वर्तमान न्यायपालिका से कदाचित् संतुष्ट नहीं हैं। यदि ऐसा है तो हम उसे बदल सकते हैं, पर एक ऐसे संविधान में, जौ सदैव बना रहेगा न्यायपालिका के हाथों में से इतनी व्यापक शक्तियों का छीन लेना और कार्यपालिका द्वारा नियुक्त परामर्शदात्री मंडली को सौंप देना एक ऐसी बात है जो संभव हो सकता है कि भविष्य में हम ही को अपनी लपेट मैं ले ले और यदि ऐसा हुआ तो मुझे कोई आश्चर्य नहीं होगा।

इन त्रुटियों के होते हुए भी इस संविधान में हमने एक बहुत ही अच्छा उपबंध रखा है, अर्थात् वह अनुच्छेद जिसके द्वारा अवसर पड़ने पर इस संविधान का संशोधन हो सकता है। संविधान एक जीती जागती उन्नति है और मैं आशा करता हूं कि समय आने पर इस उपबंध का उपयोग उन लोगों द्वारा किया जायेगा जो हमारे बाद आयेंगे और परिवर्तित परिस्थितियों के अनुसार जैसा वह चाहें वैसा परिवर्तन करेंगे।

***श्री बी.ए. मान्डलोई:** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, हम अपनी यात्रा समाप्त करने वाले हैं। और कुछ दिनों में यह सभा अपना कार्य समाप्त करेगी और राष्ट्र को स्वतंत्र तथा स्वाधीन भारत का संविधान भेंट करेगी।

पिछली बार संविधान सभा ने कुछ सिद्धान्त निर्धारित किये थे और मसौदा समिति को संविधान निर्माण करने का कार्य सौंपा था और मसौदा समिति ने संविधान का मसौदा प्रस्तुत किया था। हमें यह देखना है कि क्या संविधान में हमने कोई सुधार किये हैं और उसमें क्या क्या रूप भेद किये हैं और क्या वे रूप भेद वास्तव में देश के सर्वोत्तम हित के लिये हैं।

सबसे अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि भारत से नरेन्द्र व्यवस्था पूर्णतया उठ गई और 560 देशी रियासतें या तो पड़ौसी प्रान्तों में मिल गई या आपस में मिलकर उन्होंने संघ बना लिये या उनको केन्द्रीय सरकार के प्रशासन में रख दिया गया। नरेन्द्रों के अधीन भारत की जनता जिसको नगरपालिकाओं तथा जिला मंडलियों के संचालन करने तक के साधारण अधिकार नहीं थे वह अब स्वतंत्र हैं और उसको अब अपने अपने राज्यों के प्रशासन करने का हक अधिकार रूप में होगा और राज्यों को भारतीय संघ के अन्य प्रान्तों के स्तर पर रख दिया गया है।

केबिनेट मिशन की योजनानुसार देशी रियासतों को केवल सीमित विषयों के लिये केन्द्र में प्रवेश करना था अर्थात् प्रतिरक्षा, विदेशी विषय और संचार के लिये। पर अब हम देखते हैं कि इन देशी रियासतों का संविधान प्रान्तों के संविधान के अनुरूप होने वाला है। केवल पांच वर्ष का समय देशी रियासतों को प्रान्तों के समक्ष आने के लिये दिया गया है।

इस सभा में संविधान के मसौदे के उपस्थित हो जाने के पश्चात जो परिमाण इस संविधान द्वारा तथाकथित अल्पसंख्यक वर्गों को दिये गये थे उन परित्राणों को उन्होंने स्वेच्छापूर्वक छोड़ दिया। इन उपबंधों को अर्थात् बिना रक्षण के संयुक्त निर्वाचन सम्बन्धी उपबंधों को आरम्भ में ही अल्पसंख्यक वर्गों पर लागू किया जा सकता था, पर हमने देखा कि भारत के विभाजन के पश्चात् अल्पसंख्यक वर्गों को इन बातों का समाधान हो गया था कि हमारी सरकार असाम्प्रदायिक होगी और धर्म तथा अन्य कारणों के आधार पर भिन्न प्रकार का व्यवहार नहीं किया जायेगा, अत: अल्पसंख्यक वर्ग पूर्ण संतुष्ट होकर आगे बढ़े और उनके नेताओं ने स्पष्ट घोषणा की कि वे किसी प्रकार के रक्षाकवच नहीं चाहते हैं। उनका यह विचार परिवर्तन एक महान सफलता है और एतद्पश्चात हम संयुक्त निर्वाचन रखने वाले हैं। अनुसूचित जातियों के लिये उपबन्ध जरूर बनाये गये हैं कि कुछ वर्षों तक रक्षित

[श्री बी.ए. मान्डलोई]

स्थानों का वे उपभोग करेंगे पर उस समय के पश्चात् यह रक्षाकवच भी मिट जायेगा। इसका यह अर्थ कि अल्पसंख्यक वर्गों को यह पूर्ण विश्वास हो गया है कि भारतीय संघ में उनको सम-अधिकार, सम-विशेषाधिकार और सम-अवसर प्राप्त होंगे जैसा कि संविधान में उपबन्ध किया गया है। अत: यह बात बहुसंख्यक वर्ग द्वारा अल्पसंख्यक वर्ग पर आरोपित नहीं की गई है वरन् यह उस विश्वास के कारण अल्पसंख्यक वर्ग ने स्वेच्छापूर्वक छोड़ दी है जिसकी उन्हें प्रतीति हो गई है।

एक अन्य महत्वपूर्ण विषय जिस में संविधान सभा ने सफलता प्राप्त की है वह एक राजभाषा का उपबन्ध है अथात् समस्त संघ के लिये देवनागरी लिपि में हिन्दी। यदि हम अपने देश के पिछले इतिहास को देखें तो हमें विदित होगा कि भारत में किसी समय भी एक ऐसी भाषा नहीं रही जो समस्त देश में बोली और लिखी जाती हो। संविधान सभा ने समस्त देश के लिये एक भाषा और लिपि की नींव रखी है और इस कार्य में उन सब सदस्यों को सर्वसम्मति से सफलता मिली है जो भिन्न भिन्न प्रान्तों से आये हैं और भिन्न भिन्न भाषा भाषी हैं। हिन्दी को राज भाषा के रूप में पसन्द करने पर कोई मनोमालिन्य नहीं था यद्यपि छोटी-छोटी बातों पर आरम्भ में कुछ झगड़ा था पर अन्त में हम इस सुखद विनिश्चय पर पहुंचे कि भारत जैसे महान देश के लिये हमें एक भाषा रखनी चाहिये और वह एक भाषा देवनागरी लिपि में लिखित हिन्दी हो।

समस्त देश के लिये एक भाषा की व्यवस्था करते हुए हम इस बात के प्रति सावधान रहे कि प्रांतीय भाषाओं को किसी रूप में कोई हानि न हो। प्रान्तीय भाषाओं की उन्नति के लिये पूर्ण क्षेत्र है और उन भाषाओं का अपना उच्च साहित्य है।

अपनी प्राचीन सभ्यता, संस्कृति और परम्परा का विचार करते हुए हमने अपने देश का एक उपयुक्त नाम रखा है और वह नाम भारत है। यह सबकी मर्जी से किया गया है।

एक और सफलता समस्त संघ में न्याय प्रशासन की एक रूप पद्धति का उपबन्ध है। हमने केन्द्र में उच्चतम न्यायालय और विभिन्न राज्यों में उच्च न्यायालयों की व्यवस्था की है। उच्च न्यायालय केन्द्र के नियंत्रण में रहेंगे। अत: दोनों उन्नत तथा पिछड़े हुए राज्यों में न्याय की एक रूप पद्धति होगी। निदेशक सिद्धान्तों में हमने यह भी उपबन्ध किया है कि कुछ वर्षों में हमारे यहां न्यायपालिका और कार्यपालिका अलग-अलग हो जायेंगी।

केन्द्र को शक्तिशाली बनाने के लिए सफल प्रयास किया गया है। यद्यपि प्रान्तीय स्वायत्तता के कुछ समर्थकों ने इस बात पर जोर दिया था कि प्रान्तों की स्वायत्तता पर कोई अतिक्रमण नहीं होना चाहिये पर हमने यह सोचा कि हमें पिछड़े हुए क्षेत्रों को उन्नत बनाना है और भारतीय संघ को भी दृढ़ तथा शक्तिशाली बनाना है इसलिये हमने यह स्वीकार किया कि केन्द्र को पर्याप्त शक्तियां होनी चाहिये। साथ ही साथ यह सावधानी की गई कि प्रान्तीय प्रशासन को दुर्बल न बनाया जाये। प्रान्तीय विषयों में और प्रान्तों को जो विषय सौंपे गये हैं उनके शासन में उन्नति करने के लिये प्रान्तों को पर्याप्त क्षेत्र दिया गया है। जिससे कि केन्द्र की सहायता से प्रान्तों में वास्तविक कार्य किया जा सके।

अन्तिम विषय जो कि एक बहुत ही विवादास्पद विषय था, वह सूत्र था जिसे हमने राज्य और संघ के प्रयोजन हेतु संपित्त-अर्जन करने के लिये स्वीकार किया है। सूत्र एक ही बनाया गया चाहे वह जमींदारी मिटाने के लिये हो या औद्योगिक कारखानों पर अधिकार करने के लिये हो या उद्योगों के राष्ट्रीकरण के लिये हो। उस सूत्र के अनुसार हम देखते हैं कि लोक प्रयोजनों के लिये संपत्ति-अर्जन की विधि बनाने की मुख्य शक्तियां विधान मंडलों को दे दी गई हैं। यह वास्तव में एक महान सफलता है।

ये कुछ महत्वपूर्ण बातें हैं जो इस वर्तमान मसौदे में रखी गई हैं जो सभा में अन्तिम स्वीकृति के लिये पेश किया गया है।

हम अपने संविधान में दो महत्वपूर्ण बातें पाते हैं उनमें से एक प्रस्तावना है जो संविधान के उद्देश्यों की एक परिभाषा है। हमने उद्देश्यमूलक सिद्धान्तों में यह संकेत किया है; हमारे संविधान का प्रकार और क्षेत्र न्याय, स्वातन्त्र्य, समता और बन्धुता पर आश्रित है। मूलाधिकारों के अनुच्छेदों में हमने वाक्-स्वातन्त्र्य, सन्था बनाने का स्वातन्त्र्य, अपने अपने धर्म पालन का स्वातन्त्र्य इत्यादि के उपबन्ध रखे हैं। निदेशक सिद्धान्तों के विषय का एक अध्याय है जिसमें हमने वह मूल सिद्धान्त निर्धारित किये हैं जो राज्यों और एककों को इस विषय में मार्ग प्रदर्शित करेंगे कि प्रस्तावना में निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये राज्यों को क्या करना चाहिये। अत: जिन लोगों पर केन्द्र तथा राज्यों के प्रशासन संचालन करने का उत्तरदायित्व है यदि वे लोग लक्ष्यमूलक संकल्प, मूलाधिकारों और निदेशक सिद्धान्तों को ध्यान में रखेंगे तो मुझे इस में सन्देह नहीं कि हमारा देश कालान्तर में सुखी, सम्पन्न, दृढ़ तथा शक्तिशाली होगा।

इस संविधान की कुछ आलोचनायें की गईं थीं जिनमें से एक यही थी कि प्रशासन अतिव्ययी है। स्वराज्य प्राप्त करने से पूर्व कांग्रेस जनता को विश्व में पुकार पुकार कर यह कहती थी कि हमारे जैसे निर्धन देश में जहां कि अधिकांश लोगों को दो बार भर पेट भोजन नहीं मिलता है किसी व्यक्ति को चार और पांच अंकों का वेतन न मिले, परन्तु फिर भी अपने संविधान में कुछ महत्वपूर्ण पदों के लिये हमने बड़े-बड़े वेतनों की व्यवस्था की है। इस आलोचना में कुछ सच्चाई है। जनता को यह आशा थी और वह इस बात को पसन्द करती कि संविधान सभा उन प्रतिज्ञाओं को पूरा करती जो कांग्रेस ने समय समय पर जनता के साथ की थीं और लोगों के कर देने की सामर्थ्य पर विचार करते हुए उच्च वेतनों को कम करती। दुर्भाग्यवश हमने ऐसा नहीं किया है। पर अब भी आशा की किरण है। यह उपबन्ध कर दिया गया है कि संक्रांति काल में और जब तक कि संसद इस विषय को अपने हाथ में न ले और विधान द्वारा उच्च पदों के लिये वेतन नियत न करे तब तक संविधान की विभिन्न अनुसूचियों में जिन वेतनों की व्यवव्था की गई है वे उन व्यक्तियों को दिये जायेंगे। मुझे आशा है कि हमारी भावी संसद जिसका निर्माण वयस्क मताधिकार के आधार पर होगा वह इस उत्तरदायित्व का अनुभव करेगी और वेतन की दरों में उग्र रूप से परिवर्तन करेंगी जिससे कि यह भार इस देश के लोगों के कर देने की सामर्थ्य के अनुपात में आ सके।

दूसरी आलोचना जो की गई है वह यह है कि एककों को दुर्बल बनाकर केन्द्र बहुत शक्तिशाली बना दिया गया है। मेरा निवेदन यह है कि इस आलोचना में

[श्री बी.ए. मान्डलोई]

कोई बल नहीं है। केन्द्र की शक्ति एककों की शक्ति है और एककों की शक्ति केन्द्र की शक्ति है। एकक एक समस्त संयुक्त शरीर के अर्थात् केन्द्र के अंग हैं। हमें केन्द्र के महान उत्तरदायित्वों और विभिन्न एककों के प्रकार तथा रचना को ध्यान में रखना है। अतः यह आवश्यक है कि केन्द्र शक्तिशाली हो।

श्रीमान, अपने भाषण के अन्त में यदि मैं मसौदा समिति के बारे में कुछ शब्द न कहूं तो मैं अपने कर्तव्य से विमुख हो जाऊंगा। यह सुविदित है कि इस समिति पर बड़ा भारी तथा बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य था। डॉ. अम्बेडकर के सभापतित्व के अधीन इस समिति के सदस्यों ने अपना कार्य प्रसन्नतापूर्वक श्रेष्ठ रूप में किया और हमें संविधान का मसौदा भेंट किया। मैं जानता हूं कि इस सभा में कई विवादग्रस्त विषयों में मसौदा समिति के सभापति ने अपना दृष्टिकोण बड़ी योग्यता से प्रस्तुत किया और उस वाद विवाद को संतोषजनक रीति से समाप्त करने में सफल हुए। यह सभा मसौदा समिति की सेवाओं की प्रशंसा करती है और स्वतंत्र तथा स्वाधीन भारत के संविधान के सफल संचालन के लिये मैं इस समिति के सभापति डॉ. अम्बेडकर को बधाई देता हूं। यह संविधान तीन वर्ष की एक प्रमाणिक अवधि के अन्तर्गत तैयार किया गया है—सच तो यह है कि इन तीन वर्षों में से हमें वह समय निकाल देना चाहिये जिसमें हमें वे कष्ट भुगतने पड़े जिनको न हम रोक सकते थे और जो अनिश्चित दशाओं के कारण हुए। यह एक महान सफलता है। श्रीमान, पत्र पर एक अच्छा संविधान बना लेना ही पर्याप्त नहीं है वरन् उसको कार्यान्वित करने की जनता की इच्छा, जनता की निष्कपटता और उसकी उत्कट अभिलाषा है जो कि महत्वपूर्ण है। यदि इस भावना से यह संविधान कार्यान्वित किया जाता है तो मुझे विश्वास है कि हमारे देश का भविष्य उज्ज्वल होगा। हम अपने देश के लिये उज्ज्वल भविष्य की कल्पना करते हैं और हम यह कामना करते हैं कि वह संसार का एक अग्रगण्य देश हो। जिस भावना से हमने यह संविधान बनाया है यदि उसी भावना से हम इसे कार्यान्वित करें तो मुझे दृढ़ विश्वास है कि देश का भविष्य उज्ज्वल होगा। इन शब्दों के सहित मैं इस प्रस्ताव का समर्थन करता हूं।

***श्री कृष्ण चन्द्र शर्मा** (संयुक्त प्रान्तः जनरल): अध्यक्ष महोदय, आज का दिवस महान है क्योंकि आज हम एक स्वतंत्र वातावरण में एक स्वतंत्र देश का संविधान पारित कर रहे हैं।

तीस वर्ष पूर्व जब मैं युवा हुआ ही था मुझसे 'बादशाह चिरायु हो' गाना गवाया जाता था। बाद में उस बादशाह के एक अधिकार चिन्ता के कारण मुझे कई रातें बेचैनी में बितानी पड़ी। इस दिवस के लिये मैंने स्वप्न देखा, आशायें बांधी, संघर्ष किया और कष्ट सहे। मुझे हर्ष है कि वह दिन आज आ गया। शताब्दियों पूर्व संयुक्त राष्ट्र अमरीका में जब उन्होंने अपना स्वतंत्र संविधान बनाया तो एक व्यक्ति उत्साहपूर्वक चिल्लाया "हे ईश्वर, तेरी कृपा से हमारा राष्ट्र बन गया...।" अतः, ईश्वर की कृपा से हमारा भी राष्ट्र बन गया—एक ऐसा राष्ट्र जिसे सद्विचार करने की शक्ति है, एक ऐसा राष्ट्र जिसे आकांक्षायें करने की शक्ति है, एक ऐसा राष्ट्र जिसे कार्य-संपादन करने की शक्ति है, अपने स्वप्नों को सार्थक बनाने और

अपनी उन्नति की संभावनाओं पर विचार करने की शक्ति है। यह अब आप ही पर निर्भर है कि उन व्यक्तियों की, जो चल बसे हैं, मनोवांछित इच्छाओं की पूर्ति करें, उन लोगों की, जो आपके साथ प्रयत्नशील हैं, इच्छाओं को पूरा करें और उनकी भलाई करें जो हमारे बाद आयेंगे।

श्रीमान, अन्य किसी वस्तु के समान जिस की उत्पत्ति मानव प्रयास द्वारा होती है संविधान भी अपने युग की एक सन्तति होती है और यह संविधान भी उसी रूप में है। जिन परिस्थितियों में इसका निर्माण हुआ है उसके अनुसार यह एक अच्छा या बुरा संविधान होगा। वर्षों पूर्व सन् 1928 की नेहरू रिपोर्ट में कुछ लक्ष्य निर्धारित किये गये थे और संविधान की कुछ रूप रेखा दी गई थी। यद्यपि इतने शब्दों और पदों में, इतने खंडों और अनुच्छेदों में यह संविधान उस रिपोर्ट की प्रतिच्छाया नहीं है पर उसका भाव इस संविधान में रख दिया गया है और फिर हमारे पास सप्रू रिपोर्ट भी थी। और कांग्रेस के उद्देश्यों पर विभिन्न संकल्प भी थे। और हमारे पास भारत शासन अधिनियम 1935 भी था। इस संविधान में जो विचार आपको निहित दिखाई देते हैं उसके लिये आपको वे पिछले लेख देखने होंगे जो प्राप्य हो सके थे जैसे कि गोल मेज सम्मेलन के परिणाम। इन सब बातों में सबसे महत्वपूर्ण बातें आर्थिक दबाव, सामाजिक बल, राजनैतिक प्रगति और बाह्य संसार से हमारे सम्बन्ध और सम्पर्क थे जिन्होंने हमारे संविधान को यह रूप दिया। संसार में कोई भी लिखित संविधान अपनी एकमात्र पृथक सत्ता नहीं रख सकता है और आर्थिक दबाव से विदेशी शक्तियों के सम्बन्धों या देश की विदेशी नीति से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता है। यदि आप अमरीका के संविधान पर गौर करें तो आपको विदित होगा कि उस पर अठारहवीं शताब्दि की और ब्रिटिश संविधान की प्रगति की छाप है। बोनापार्ट के समय के फ्रांस के संविधान ने यूरोप के उन्नीसवीं शताब्दि के संविधानों को अधिकांश रूप में प्रभावित किया है। कोई भी संविधान अपनी एकमात्र पृथक सत्ता नहीं रख सकता है। सही मार्ग केवल यही है कि हम अन्य व्यक्तियों के अनुभव से ब्रिटिश संविधान और अमरीका के संविधान से लाभ उठायें। उन राष्ट्रों को लोकतंत्रात्मक तथा प्रतिनिध्यात्मक संस्थायें चलाने का दीर्घकालीन अनुभव है। हमने संसार के अन्य भागों के अनुभवों से लाभ उठाया है। इस विचार से हमें किसी संविधान का विश्लेषण करना है, जैसा कि मार्शल ने 1816 में कहा था, और यह देखना है कि क्या वह तीन महान विभागों की कार्यपालिका की, विधान मंडल की और न्यायपालिका की व्यवस्था करता है। विधान मंडल का कार्य जनता की संपूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता बनाये रखते हुए विधि पारण करना है। अन्य लोकतंत्रात्मक संविधानों के समान हमारा संविधान जनता की सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्नता को प्रतिष्ठित करता है। अमरीका के संविधान के समान हमारा संविधान अपनी प्रस्तावना को "हम, भारत के लोग..." इन स्पष्ट शब्दों से आरम्भ करता है। हमने सबके लिये मताधिकार रखा है। हम विश्वास कर सकते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति जो सोच समझ सकता है उसे मत देने का अधिकार होगा और इस महान देश के निर्माण में अपना सहयोग देगा। एक व्यापक आधार पर आश्रित विधान मंडल जिसका निर्वाचन वयस्क मताधिकार द्वारा होगा वह जनता की इच्छा को व्यक्त कर सकता है और उसका पालन कर सकता है। ऐसा विधान मंडल विधि के वास्तविक अर्थ के अनुरूप विधि का निर्माण करेगा क्योंकि न्यायिक व्यवस्था के दीर्घकालीन विकास के आधार पर हम इस परिणाम पर पहुंचे हैं कि विधि

[श्री कृष्ण चन्द्र शर्मा]

का अर्थ है लोगों की इच्छा। प्राचीन काल में विधि का अर्थ था एक व्यक्ति की इच्छा, बाद में उसका अर्थ हुआ कुछ व्यक्तियों की इच्छा, पर अब विधि का वास्तविक अर्थ जनता की इच्छा है। क्योंकि हमने वयस्क मताधिकार रखा है हमारा विधान मंडल समस्त राष्ट्र की इच्छा को व्यक्त करेगा।

इसके पश्चात् कार्यपालिका आती है। जो कार्यपालिका हमारे यहां है वह राष्ट्रपति और प्रधान मंत्री सहित एक शक्तिशाली कार्यपालिका है और राष्ट्रपति को सहायता तथा मंत्रणा देने के लिये प्रधान मंत्री है। यदि आप अमरीका की ओर देखें तो वहां न्यायपालिका को सर्वोच्च शक्ति प्राप्त है और ब्रिटिश संविधान में भी विधान मंडल की यही स्थिति है। ब्रिटिश संविधान में यह होता है कि संपत्ति के समाजीकरण के लिये विधान मंडल कोई भी विधि पार कर सकती है पर सेवक वर्ग उसका पालन नहीं करेगा। अत: वहां विधान मंडल और सेवक वर्ग एक दूसरे से प्रथक हैं। विधान मंडल कोई भी विधि पारित कर सकती है पर सेवक वर्ग को यह अधिकार है कि वह उसके पालन करने से इन्कार कर दे और विधान मंडल सेवक वर्ग को अपदस्थ नहीं कर सकता। अत: केवल विधि पारित करने की शक्ति का अर्थ यह नहीं है कि उनको प्रवर्त्तन करने की भी शक्ति है। अमरीका के संविधान में कांग्रेस कोई भी विधि पारित कर सकती है पर उच्चतम न्यायालय उसे रद्द कर देगी। वहां विधान मंडल और न्यायपालिका में परस्पर तथा राष्ट्रपति और कांग्रेस में परस्पर कोई सम्बन्ध नहीं है। फल यह हुआ कि 1933 से 1936 तक राष्ट्रपति और उच्चतम न्यायालय में तथा राष्ट्रपति और कांग्रेस में परस्पर कटु संघर्ष हुआ है। उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों पर महाभियोग लगाने और उनको हटाने के कई मामले हुए हैं। हमारे संविधान में इन सब कठिनाइयों पर ध्यान दिया गया है। हमारे यहां राष्ट्रपति और प्रधान मंत्री सहित एक कार्यपालिका है और प्रधान मंत्री के द्वारा वह कार्यपालिका विधान मंडल के प्रति उत्तरदायी है। और फिर, हमारे यहां न्यायपालिका है और वह उस न्यायपालिका से अधिक कार्यक्षम है जिसकी व्यवस्था अमरीका के संविधान में है। अमरीका के संविधान में यह होता है कि राष्ट्रपति न्यायाधीशों को नियुक्त करता है और शिकायत यह है कि कुछ न्यायाधीश व्यभिचारी हैं और बिल्कुल निकम्मे लोग जिला-न्यायाधीश के रूप में नियुक्त किये जाते हैं। उच्चतम न्यायालय के कुछ न्यायाधीश विधि-विज्ञ न्यायाधीश नहीं हैं। उनकी नियुक्ति वकील मंडल में से नहीं हुई है। उन्हें विधि का अधिक ज्ञान नहीं है। बहुत सी नियुक्तियां राजनैतिक दृष्टिकोण से की गई हैं। जैसा मैंने कहा था अदक्षता से उद्दंडता उत्पन्न होती है और उद्दंडता का परिणाम अनुत्तरदायित्व है और अनुत्तरदायित्व कदाचार और रिश्वत का जनक है। हमारा संविधान ब्रिटिश और अमरीका के संविधानों से अच्छा संविधान है क्योंकि तीनों मूलभूत विभागों में अर्थात् विधान मंडल में, जो विधि निर्माण करती है, हमने जनता की इच्छा व्यक्त करने के लिये व्यवस्था की है। हमने जनता के प्रति उत्तरदायित्वपूर्ण एक शक्तिशाली कार्यपालिका की व्यवस्था की है। न्यायपालिका में हमने स्वाधीन, ईमानदार और दक्ष न्यायाधीशों की व्यवस्था की है और जब कि अमरीका की उच्चतम न्यायालय जनता

की इच्छा को ठुकरा सकती है, हमारे संविधान में ऐसी कोई बात नहीं है। साथ ही साथ कार्यपालिका या विधान मंडल द्वारा कोई अनुत्तरदायित्वपूर्ण कार्य नहीं किया जा सकता है क्योंकि मूलाधिकारों के अनुच्छेद 19 में हमने 'युक्तियुक्त निर्बन्धन रख दिये हैं। यदि कार्यपालिका या विधान मंडल कभी अपने युक्तियुक्त क्षेत्र से परे होती है तो उच्चतम न्यायालय को उस विधि की मान्यता पर आपत्ति करने का अधिकार है। इस विषय पर बहुत कुछ कहा जा चुका है। कि मूलाधिकारों पर बहुत से निर्बन्धन रख दिये गये हैं और व्यक्ति के लिये बहुत ही कम स्वतंत्रता रहने दी गई है। जैसा कि मैंने आरम्भ में कहा था मैं निवेदन करता हूं कि संविधान अपने युग की एक सन्तति है। यदि आप आधुनिक संविधानों पर ध्यान दें तो प्रत्येक आधुनिक संविधान पर आर्थिक तथा सामाजिक परिस्थितियां और देश की विदेशी नीति और आधुनिक युग के विचारकों और लेखकों की छाप होती है। वे लेखक और विचारक जिन्होंने ने इस युग का निर्माण किया: रूसो का विधि तथा वाद-विवाद करने वालों का प्रभाव, बेन्थम का सामान्य इच्छा का विचार और हेगल, ओवन, मार्क्स के उपयोगिता के सिद्धान्त। अपने मार्ग प्रदर्शन के लिये हमारे पास हमारी निजी राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक पृष्ठभूमिका थी। हमारे लिये स्वतंत्रता का विषय इतना महत्वपूर्ण नहीं है जितना कि राष्ट्र निर्माण का। वर्तमान आवश्यकता एक दृढ़, संगठित और सम्पन्न राष्ट्र बनाने की है। अत: इस दृष्टिकोण से मैं देखता हूं कि इस संविधान में केवल एक बात की कमी है। हमने मूलाधिकार तो कई रखे हैं पर हमने नागरिकों के तदनुवर्त्ती आभार नहीं रखे हैं। नार्वे का उदाहरण लीजिये, रूस का उदाहरण लीजिये आप देखेंगे कि मूलाधिकारों के साथ-साथ नागरिकों के मूलाभार भी हैं। मेरी बड़ी इच्छा है कि नागरिकों के मूलाभारों का अनुच्छेद भी इस संविधान में होता। परन्तु फिर भी मेरा विचार है कि यदि हमने घोर परिश्रम किया तो हम अपने देश को शक्तिशाली और सम्पन्न बना सकते हैं।

***श्री खांडूभाई के. देसाई** (बम्बई: जनरल): श्रीमान, हम अपने संविधान का तृतीय पठन कर रहे हैं और कुछ दिनों में हम इस संविधान को स्वीकार कर लेंगे और देश को तथा स्वयं अपने आप को अर्पण करेंगे। अत: यह स्वाभाविक है कि जो चित्र हम तीन वर्ष के पश्चात् खींच पाये हैं। उसके प्रति परस्पर धन्यवाद देने और कृतज्ञता प्रकट करने का यह अवसर है।

सभा के समक्ष मुझे यह स्पष्ट प्रकट का देना चाहिये कि हम में से बहुत से व्यक्ति जिनको इस संविधान सभा में संविधान बनाने के लिये भेजा गया है उनको संविधानों के विषय में केवल कुछ बातों का अस्पष्ट सा ज्ञान था और एक स्वतंत्र गणराज्य का क्या संविधान होना चाहिये इस विषय में हमारे कुछ नारे, कुछ विचार और कुछ सैद्धान्तिक धारणायें थीं और इस कारण जहां तक मेरा सम्बन्ध है—औरों के लिये मैं नहीं कह सकता—यह सभा मेरे लिये तो एक प्रकार की पाठशाला रही है। मैंने यह सीखा है कि संविधान किस प्रकार बनाये जा सकते हैं जिससे कि यथार्थ परिस्थिति पर ध्यान रखा जा सके। मैं कोई संविधान के विषय का वकील नहीं हूं और न मैं साधारण वकील हूं और इस कारण मैं यह नहीं जानता

[श्री खांडूभाई के. देसाई]

हूं कि जिस संविधान को हम आत्मार्पित कर रहे हैं क्या वह उन उद्देश्यों की पूर्ति करेगा जिनको लेकर हमने इस संविधान का निर्माण करना आरम्भ किया था, पर श्रीमान, एक आशा अवश्य है और वह यह है कि हमें लगभग तीन वर्ष लगे हैं और ये तीन वर्ष ऐसे नहीं थे कि इस समय में समाज की दशा स्थिर रही हो। समाज की दशा भारतीय सम्प्रदाय की दशा अस्थिर रही थी, परिवर्तन हो रहे थे और उन परिवर्तनों को हमें अपने संविधान में भी रखना पड़ा और हमारे उन दो महान नेताओं ने हमें मंत्रणा दी जो सर्वोच्चासन पर हैं और जो वास्तव में महात्मा गांधी की हमारे लिये देन है। उन्होंने अपने महान स्वामी के चरणों में दोनों व्यावहारिक कार्य संचालन और आदर्शवाद के पाठ पढ़े हैं और इन विगत तीन वर्षों की अवधि में हमें सदैव उनसे पथप्रदर्शन मिला। और उनकी मंत्रणा मिली और मैं यह कहूंगा कि हमने, जब हम पर कठिनाइयां आई सदा, उनकी मंत्रणा को स्वीकार किया। कुछ लोग पिछले दो दिनों से इस सभा में यह कह रहे हैं कि यह संविधान एकात्मक है और कुछ लोग फेडरल कहते हैं। मेरे विचार से यह दोनों में से एक भी नहीं है, न यह एकात्मक है और न फेडरल। यह एक ऐसा संविधान है जो हमारी अपेक्षाओं के अनुरूप है। हम सिद्धान्तों के आधार पर इसको क्यों आंकें? यह एक ऐसा संविधान है जो हमारी अपेक्षाओं के अनुरूप है। हमारी अपेक्षायें क्या हैं? हमारी अपेक्षायें ये हैं कि एक ऐसा राजनैतिक ढांचा हो जो यह देखने के लिये कि आर्थिक या राजनैतिक ह्रास न हो केन्द्र को पर्याप्त शक्तियां देने के साथ-साथ उपक्रमण करने का कार्य एककों पर छोड़ दे। क्या इस उद्देश्य की पूर्ति हुई है श्रीमान, इस विषय में मेरी तुच्छ धारणा यह है कि उस उद्देश्य की यथार्थ रूप में पूर्ति हुई है। कोई मुझे से यह प्रश्न कर सकता है "आप यह निश्चयोक्ति क्यों करते हैं?" इसका मैं यह उत्तर दूंगा कि मैं यह निश्चयोक्ति नहीं करता हूं पर सौभाग्यवश इस संविधान के बनाने में विभिन्न प्राप्त के प्रधान मंत्रियों ने पूर्ण भाग लिया है। वे कभी कभी केन्द्र से झगड़ जाते थे और कभी कभी केन्द्र उनसे झगड़ जाता था और अन्त में वे लोग जो केन्द्रीकरण के पक्ष में थे और वे जो विकेन्द्रीकरण के पक्ष में थे किसी सुखद परिणाम पर पहुंचते थे और जैसा कि मैंने आरम्भ में कहा था हम लोग जो न तो प्रशासन कार्य के विशेषज्ञ थे और न संविधान कार्य के विशेषज्ञ थे और इस कारण जब ये लोग इस परिणाम पर पहुंच जाते थे कि जो कुछ उन्होंने तय किया है वह हमारी आवश्यकताओं के अनुकल है तो हमें यह स्वीकार कर लेना चाहिये कि वह सच है। और फिर हमें यह भी विचार करना है कि हम यहां संसार के एक सबसे महान गणराज्य के लिये संविधान बनाने के लिए एकत्रित हुए हैं। और वह भी एक अहिंसात्मक तथा लोकतंत्रात्मक क्रांति की एक अनोखी रीति के द्वारा स्वाधीनता प्राप्त करने के पश्चात्। यह वास्तव में संतोष का विषय है कि हम एक शांतिपूर्ण तथा लोकतंत्रात्मक वातावरण में यह संविधान बना सके।

मैं यह कह रहा था कि विश्व इतिहास की एक बहुत ही अनोखी घटना के परिणामस्वरूप हमें यह संविधान निर्माण करने के लिये आमंत्रित किया गया था अर्थात् एक लोकतंत्रात्मक अहिंसात्मक क्रांति के परिणामस्वरूप और जैसा कि मैंने कहा था हम वास्तव में कृतज्ञ हैं कि हमें बिना किसी ऐसी रुकावटों के लिए किसी कठिनाइयों के विगत तीन वर्षों में अपना संविधान बनाने दिया जब कि अन्य देशों को अपने संविधान बनाने में इन रुकावटों और कठिनाइयों का सामना करना पड़ा।

अतः श्रीमान, हमें इस बात का गौरव है कि हम एक लोकतंत्रात्मक तथा शांतिपूर्ण रीति से संविधान बना सके। और इस देश को एक ऐसा संविधान भेंट कर सके जो लोकतंत्र स्थापित करेगा और लोकतंत्र द्वारा हमारे देश की आवश्यकताओं के अनुकूल उसका विकास होगा।

इस दृष्टिकोण से यह संविधान हमारे प्रयोजन की पूर्ति करे या न करे पर उसे ग्रहण तो करना ही होगा। आखिर यह संविधान है क्या? यह संविधान हमारी आवश्यकताओं के अनुकूल एक तंत्र है जिसका हमने अपने लिये उपयुक्त रूप में सृजन किया है और जो कुछ हमने प्रस्तावना और मूलाधिकारों में कहा है और जो निदेशक विधान मंडल को दिये हैं उनके संपालनाथ इसका सृजन किया है। यह कहा गया है कि उन प्रयोजनों की पूर्ति नहीं होगी क्योंकि हममें कुछ लोग दुर्भाग्यवश अब भी यह समझते हैं कि वयस्क मताधिकार एक बड़ा महान प्रयोग है। मैं नहीं समझ पाता हूं कि यह प्रयोग क्यों है। यदि आप वयस्क मताधिकार नहीं देना चाहते हैं तो आपको सब प्रकार के प्रतिनिधियों को लाना होगा—आपको श्रम के प्रतिनिधि लाने होंगे, आपको वाणिज्य के प्रतिनिधि लाने होंगे, आपको स्त्रियों के प्रतिनिधि, उद्योग के प्रतिनिधि और जमींदारों के प्रतिनिधि भी और न जाने किस किस के प्रतिनिधि लाने होंगे। आप प्राचीन रीति के अनुसार भिन्न-भिन्न विभागों को लेकर नहीं चल सकते हैं। वयस्क मताधिकार कोई ऐसी वस्तु नहीं है जो एक प्रकार का प्रयोग हो और मेरी सम्मत्ति में तो वह इस संविधान का एक अत्यन्त आवश्यक अंग है। वयस्क मताधिकार को निकाल दीजिये तो आप का एक ऐसा संविधान हो जायेगा जिसकी ओर आप देखना तक पसन्द नहीं करेंगे। बहुधा यह कहा जाता है कि चूंकि साक्षरता नहीं है इसलिए वयस्क मताधिकार नहीं होना चाहिये। एक उस व्यक्ति के रूप में, जो पिछली पीढ़ी के तत्कथित निरक्षर लोगों के सम्पर्क में रहा है, क्या मैं यह कह सकता हूं कि तत्कथित निरक्षर व्यक्ति तत्कथत साक्षर व्यक्तियों की अपेक्षा वस्तुस्थिति के निरीक्षण करने का बहुत अच्छा साधारण ज्ञान रखते हैं। मुझे सदैव यही अनुभव हुआ। अब हम सदा के लिये यह भूल जाएं कि हममें से वे लोग जिन्हें विश्वविद्यालय की या माध्यमिक शिक्षा प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है किसी रूप में भी उन लोगों से अच्छे हैं जो किसी प्रकार का साहित्यिक ज्ञान प्राप्त नहीं कर सके हैं।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** (मध्यप्रान्त और बरारः जनरल): इस शिक्षा ने यदि कुछ किया है तो यह कि उसने हमें खराब किया है।

***श्री खांडूभाई के. देसाईः** और फिर, श्रीमान, आखिर साक्षरता है क्या? साक्षरता और कुछ नहीं है सिवा एक छोटे से यंत्र के, जिसमें साधारण ज्ञान है, प्रगति है, साहित्य है। प्रौढ़ शिक्षा के विषय में जो प्रयोग बम्बई प्रान्त में किये जा रहे हैं वे वास्तव में सफल हो रहे हैं यदि आप प्रौढ़ों को साक्षर बनाना चाहते हैं तो तीन या चार महीनों में आप उन्हें साक्षर बना सकते हैं। आपको उन्हें इतिहास सिखाने की आवश्यकता नहीं है; आपको उन्हें भूगोल सिखाने की आवश्यकता नहीं है; आपको उन्हें तत्कथित नीति तथा अध्यात्म शास्त्रों को सिखाने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि इन बातों को वे मुझ से या आप से कहीं अधिक अच्छे रूप में जानते हैं। आखिर किसके लिये हम इस लोकतंत्र को कार्यान्वित कर रहे हैं?

[श्री खांडूभाई के. देसाई]

क्या हम इस लोकतंत्र को उन दो या तीन प्रतिशत लोगों के लिये कार्यान्वित कर रहे हैं जिनको अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है? हम वास्तव में इस लोकतंत्र को शेष 97 प्रतिशत लोगों के लिये कार्यान्वित कर रहे हैं और इस लोकतंत्र को उनकी आवश्यकताओं और अपेक्षाओं के अनुसार कार्यान्वित करना चाहिये। न कि जो कुछ मैंने और आपने पुस्तकों में अध्ययन किया है उसके अनुसार। जैसा कि मैंने कहा था जब मैं इस संविधान सभा में आया था मुझे संविधान निर्माण कार्य का बहुत अस्पष्ट ज्ञान था; तो फिर यह संविधान किसने बनाया है, मेरे विचार से संविधान के जानने वाले वकीलों ने इसे नहीं बनाया है यद्यपि मैं यह कहूंगा कि अच्छे प्रोफेसरों और अध्यापकों के समान उन्होंने हमें कुछ शिक्षा दी। हम एक उस अध्यापक की सी शैली को किस प्रकार भूल सकते हैं जिसे श्री अल्लादी कृष्णास्वामी ऐयर हमें क्या अच्छा है और क्या बुरा है का पाठ पढ़ाते समय ग्रहण करते थे? हम उन अति पांडित्य पूर्ण भाषणों को किस प्रकार भूल सकते हैं जो डॉ. अम्बेडकर ने हमारे सामने दिये थे। आखिर अन्त में हुआ क्या? जब उन्होंने अपने ज्ञान का सुन्दर स्पष्टीकरण हमारे समक्ष प्रस्तुत कर दिया तो उसके पश्चात् यथार्थवादी क्षेत्र में उतरे, प्रांतों के तथा केन्द्र के प्रशासक आये और हमारे संविधान का निर्माण किया। अन्ततोगत्वा यथार्थवादियों ने हमारे अनुच्छेदों की रचना की। अत: जो कुछ मैं कहना चाहता हूं वह यह है कि आज जिस संविधान को हम बना पाये हैं वह वास्तव में एक अच्छा और उपयुक्त संविधान है। ऐसी कोई वस्तु नहीं है जो अक्षय हो। आपके संविधान में एक खंड है जो संविधान में संशोधन करने की व्यवस्था करता है। यदि भावी पीढ़ियां यह समझें कि इस संविधान में कोई त्रुटि या कोई कमी है और यदि उनमें परिवर्तन करने की आवश्यकता है तो वे परिवर्तन कर सकती हैं। इसमें क्या बुराई है?

श्रीमान, संविधान की प्रशंसा में ये सब बातें कहने के पश्चात् एक बात और है जिसके बारे में मैं कुछ कहूंगा। यद्यपि मेरे तुच्छ विचारों के अनुसार यह संविधान अपने देश की समस्याओं के यथार्थ दृष्टिकोण के आधार पर न्यूनाधिक रूप में बनाया गया है पर एक विषय ऐसा है जिसमें अपने देश के प्रति अपना कर्तव्य पालन करने में हम सब असफल हुए हैं। हमने देश के प्रत्येक यथार्थ पहलू पर विचार किया है। पर हम एक यथार्थ पहलू को भूल गये और वह है हमारे देश की राष्ट्रीय संपत्ति। हमने संविधान में कुछ वेतनों की व्यवस्था की है और संविधान द्वारा उनकी प्रत्याभूति की गई है। मेरे विचार से जिन उच्च वेतनों की इस संविधान के अधीन प्रत्याभूति की गई है वे अपने देश की राष्ट्रीय संपत्ति की तुलना में अवास्तविक हैं। सरकारी सेवकों और उच्च राष्ट्रीय पदस्थित महानुभावों के वेतन और उपलब्धियों का देश की राष्ट्रीय संपत्ति से कुछ सम्बन्ध होना चाहिये। क्योंकि संक्रांति काल में गैर सरकारी सेवकों और उद्योग की आयों और वेतनों के लिये ये वेतन और उपलब्धियां एक स्तर स्थापित करेंगी: मेरे विचार से एक समुचित स्तर स्थापित करने का यह अवसर हमने खो दिया। जैसा कि आप जानते हैं 4000 रुपयों या 5000 रुपयों या 10,000 रुपयों या 15,000 रुपयों के प्रति कोई पवित्र भावना नहीं है। यदि इस संविधान द्वारा कोई स्तर निर्धारित कर दिया जाता है और यदि हम एक संपूर्ण प्रभुत्व संपन्न निकाय के रूप में देश के लिये एक स्तर निर्धारित करते हुए यह विधान बनाते कि इस देश में किसी भी व्यक्ति को 1500 रुपये या 1000 रुपये से अधिक नहीं मिलेगा तो प्रत्येक व्यक्ति को संतोष हो

जाता। बड़े-बड़े उद्योगपतियों को अपनी आमदनी कम करनी होती, वाणिज्य से सम्बन्धित व्यक्तियों को अपनी आमदनी कम करनी पड़ती। और किसी प्रकार का डाह, ईर्ष्या तथा द्वेष न होता। यदि मेरे मित्र श्री कन्हैया लाल मुन्शी 40,000 या 50,000 या एक लाख तक रुपया कमाते हैं तो वे उस सब रुपये को खर्च नहीं करते हैं। वे एक लाख रुपया इसलिये चाहते हैं कि कुछ सौदागर दो या तीन लाख कमा लेते हैं। यदि एक बार यह कह दिया जाये कि किसी भी व्यक्ति को 1200 या 1500 रुपये से अधिक नहीं मिलेगा तो यह वैयक्तिक ईर्ष्या और द्वेष मिट जायेगा। क्योंकि आपको यह समझ लेना चाहिये कि यदि आप अपने राष्ट्रपति को 10,000 रुपया देते हैं या राज्यपाल को 5,500 रुपया देते हैं या उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति को 5000 रुपया देते हैं तो यह रुपया कहां से आयेगा? यह राष्ट्रीय संपत्ति में से भुनाया जाने वाला एक प्रकार का चैक है और यदि राष्ट्रीय निधि में कोई कमी है तो इस कमी को पूरा करने के लिये किसी न किसी को धन से वंचित रखना होगा। अत: जैसा कि मैंने कहा था जहां तक अपने संविधान में वेतनों की इस अनुसूची का सम्बन्ध है मेरे विचार से हम अपने कर्तव्य पालन में असफल रहे। पर ये प्रश्न किया जा सकता है कि भावी पीढ़ियां इसमें परिवर्तन कर सकती हैं; नया विधान मंडल इस में परिवर्तन कर सकता है। श्रीमान, वैयक्तिक उपलब्धियों और अन्य बातों के विषय में विशेषकर, जिनका प्रभाव उच्च पदस्थित महानुभावों पर पड़ता है जो व्यवहार्यत: हमारे राज्य के कर्णाधार होंगे, ऐसा करना कठिन होगा। यदि भावी पीढ़ियां और भावी विधान मंडल भी कुछ परिवर्तन करना चाहेंगे तो उन्हें विचार करना होगा, उन्हें केवल विचार करना ही नहीं होगा वरन संभव है राष्ट्रपति को यह भद्दा लगे। अत: हमने यह अवसर खो दिया इसके विरोध में मैं अपना क्षोभ प्रकट करना चाहता हूं यह प्रश्न एक और स्थल पर भी उठाया गया था, उस पर वादविवाद हुआ था पर हमने पुरानी व्यवस्था को ही अपनाया। इस प्रकार की विचार धारा को कोई समझ नहीं सकता है। हम अंग्रजों की हर एक बात छोड़ देना चाहते हैं; अंग्रेजों से हमने जो कुछ प्राप्त किया है। वह सब त्याज्य था; पर एक बात हम अवश्य रखेंगे; और वह यह है कि हमारे वेतनों का अंग्रेजी स्तर बना रहे। मैं समझता हूं कि अपने घटकों के प्रति हम यह अच्छी बात करते यदि इन बातों को बिना विनिश्चित किये छोड़ देते। भावी संसद को आवश्यकता के अनुसार इस विषय पर विनिश्चय करने के लिये स्वतंत्र छोड़ देना चाहिये था।

इसके बाद श्रीमान, एक बात और है और उसके बाद मेरा भाषण समाप्त हो जायेगा। नागरिक स्वातंत्र्य के सम्बन्ध में बहुत कुछ कहा जा चुका है। यह सच है कि हमारे मित्र प्रो. शाह को किसी भी ऐसी बात के प्रति आम शिकायत रही है जो उनकी विचार धारा के अनुकूल नहीं है। पर जब नागरिक स्वातंत्र्य का प्रश्न आता है तो लोग उन व्यक्तियों के व्यक्तिगत नागरिक स्वातंत्र्य की बातें करने लगते हैं जो सब लोगों के नागरिक स्वातन्त्र्य को छीनना चाहते हैं। जैसा कि कलकत्ता में हो रहा है या आंध्र के कुछ स्थानों में हो रहा है क्या यह उचित है कि नागरिक स्वातंत्र्य के पवित्र नाम में कुछ लोगों को अपनी वैयक्तिक नागरिक स्वतंत्रता का लाखों लोगों के नागरिक स्वातंत्र्यों का हरण करने के लिये और उनमें भय उत्पन्न करने के लिये प्रयोग करने दिया जाये? मेरे विचार से यह नागरिक स्वातंत्र्य नहीं है।

***एक माननीय सदस्य:** आपराधिक स्वातन्त्र्य है।

***श्री खांडूभाई के. देसाई:** इन परिस्थितियों में मैं समझता हूं कि इस देश के अधिकांश लोगों के नागरिक स्वातन्त्र्य की रक्षा करने के लिये जो उपबन्ध इस संविधान में बनाये गये हैं वे उचित निदेश हैं जिनके अनुसार राज्य को प्रकार्य करना चाहिये।

इन शब्दों द्वारा मैं तृतीय पठन का समर्थन करता हूं।

पंडित ठाकुरदास भार्गव (ईस्ट पंजाब: जनरल): माननीय प्रेसीडेण्ट साहब, आज मेरी खुशी का कोई ठिकाना नहीं है जब कि हजारों वर्ष गुलामी के बाद यह मौका हमको नसीब हुआ कि हम अपने देश का कान्स्टीट्यूशन बनाने की थर्ड रीडिंग पर चल रहे हैं। इस मौके पर मैं परमात्मा का धन्यवाद करता हूं जिन्होंने यह मौका हमें अता फरमाया है और जिनकी असीम कृपा से आज हम अपना कान्स्टीट्यूशन बना कर समाप्त कर रहे हैं।

इसके बाद जनाब वाला, मैं जनाब का शुक्रिया अदा करता हूं और जनाब को मुबारकबाद देता हूं कि जिस तरीके से और जिस मुहब्बत और खुलूस से और जिस इम्पारसियलटी से जनाब ने इस हाउस का प्रोसीडिंग्स कंडक्ट किया वह जनाब ही का हिस्सा था। इसमें शक नहीं है और मेरी बड़ी ख्वाहिश है कि ऐसा मौका जल्द आवे कि उस पंडित ने जिसको नामकरण के मौके पर आपकी वालदैन ने बुलाया था उसकी प्रोफेटिक वाणी फलीभूत हो जावे। मैं समझता हूं कि 'इस्म बा मुसम्मा' जिसे फारसी में कहते हैं वह चीज बहुत जल्दी अमल में आने वाली है। गवर्नरों के इन्द्र यानी नेता जनाब वाला राजेन्द्र यानी प्रेसीडेण्ट जरूर बनेंगे और आपके नाम के मुताबिक बिला शक व शुबहा हमारी ख्वाहिश पूरी होगी। और जिस असेम्बली के प्रधान जनाब वाला जब तक रहे हैं उसके फ्यूचर प्रेसीडेण्ट भी आप ही होंगे। और जो कान्स्टीट्यूशन आप की अध्यक्षता में बना है उसे अमल में आप ही परिणित करेंगे। मैं इस मौके पर कम से कम उन अशखासों को जिन्होंने इस आईन के बनाने में हमको इमदादा पहुंचाई है उनका शुक्रया अदा करना चाहता हूं। हमारे डॉक्टर एच.सी. मुकर्जी जो हमारे वाइस प्रेसीडेण्ट रहे हैं उस जमाने में जब कि जनाब वाला बीमार थे, इस हाउस की प्रोसिडिंग बहुत खूबी और मुहब्बत के साथ कंडक्ट की, उनको मैं मुबारकबाद पेश करता हूं।

इसके बाद जनाब वाला, मैं अपनी ड्राफ्टिंग कमेटी को पूरे तौर से अपना शुक्रिया अलफाजों में जाहिर नहीं कर सकता। ड्राफ्टिंग कमेटी के प्रेसीडेण्ट साहब, उनकी मेहनत, उनकी कानूनी कान्स्टीट्यूशनल वाकफियत, उन्होंने जिस कद्र वक्त दिया, जिस खूबी से एक्सपोजीशन दिया, जिस स्ट्रैन्थ के साथ और जिस मोडरेशन के साथ उन्होंने सारे सवालों का हल किया, मेरे पास इसके सिवा तारीफ के और कोई अलफाज नहीं हैं।

डॉक्टर अम्बेडकर साहब जो अपने आपको अछूतों का लीडर कहते हैं अफसोस है कि वह इस समय हाउस में मौजूद नहीं हैं, जिस पब्लिक स्प्रिट से उन्होंने इस काम में दिलचस्पी ली है हम चाहते हैं कि वह कांग्रेस में शामिल हो जायें। उन्होंने हमारे दिलों में घर कर लिया है, मुनासिब है कि संकुचित स्थान छोड़कर कांग्रेस के लीडरों के विकसित स्थान में जगह लेवें।

इसके बाद हमारे गोपालास्वामी आयंगर साहब ने हम लोगों को मुश्किल से मुश्किल मौकों पर, हमारी पार्टी में और दूसरी जगहों पर साइलैण्ट वर्कर की तरह

जिस तरह से हम लोगों की मदद की वह कहने लायक नहीं है। वह हमें बहुत अजीज हैं और मैं उनका शुक्रिया अदा करना चाहता हूं। उन्होंने ड्राफ्टिंग कमेटी में बहुत ज्यादा काम किया है।

इसके बाद मैं श्री के.एम. मुन्शी साहब को जिनका इल्म इस कदर यूनीक है, जिनका इमेजिनेशन, जिनका कम्प्रोमाईज फार्मूला लैंगवेज के ऊपर और दूसरी जगहों पर, वह हम लोगों को हमेशा याद रहेंगे। उनका भी मैं शुक्रिया अदा करना चाहता हूं।

श्री अल्लादी कृष्णा स्वामी जो देश के सबसे मशहूर कानूनदां हैं, जिनकी इलमियत, जिनकी कानूनी काबलियत हमारे इस कदर काम आई है कि उसका बयान नहीं किया जा सकता है। जिनकी दूसरे मुल्कों के कान्स्टीट्यूशन की इलमियत हमारे वास्ते इतनी मुफीद हुई, वह भी हमारे शुक्रिये के मुस्तहक हैं।

मि.बी.एन. राव जो इस समय यू.एन.ओ. में हैं मगर फिर भी उनको हर वक्त हमारी ही फिक्र लगी रहती है। उनके दूसरे मुल्कों के कान्स्टीट्यूशन के बारे में जो इल्म था और उन्होंने हमारे इस आईन के बनाने में जिस कदर मेहनत की है उसकी तारीफ के लिये मेरे पास कोई अलफाज नहीं हैं। मैं उनका भी शुक्रिया अदा करना चाहता हूं।

इसके अलावा हमारे मि. टी.टी. कृष्णमाचारी जिनके मैनर्स और कर्टसी ऐसी लुभाने वाली हैं कि उसकी तारीफ पूरी नहीं की जा सकी है और जितनी तारीफ की जाये वह थोड़ी है। डॉक्टर अम्बेडकर की तरह उन्होंने भी बड़ी मेहनत से काम किया। उन्होंने बड़ी मुहब्बत और दिलचस्पी के साथ काम किया और वकील न होते हुये भी कानूनी काबलियत दिखलाई। मैं उनका भी शुक्रिया अदा करना चाहता हूं।

ड्राफ्टिंग कमेटी के दीगर मेम्बरान जिन्होंने इसमें हिस्सा लिया वह सब हमारे शुक्रिया के मुस्तहक हैं। इन सब लोगों ने जिन्होंने इस आईन के बनाने में थोड़ा या ज्यादा काम किया है उन सबके लिये हमारे दिलों में सिवाय इज्जत के और कुछ नहीं है।

इसके सिवा मैं इस मौके पर जनाब के नीचे जो डेस्क पर जो साहबान बैठे हैं और जिन्होंने इतनी मेहनत के साथ हम लोगों को मदद पहुंचाई है उन सबको मैं मुबारकबाद देता हूं। हमारे मुकरजी साहब जो हमेशा हंसते हुये हम लोगों के पास आते हैं और ड्राफ्टिंग कमेटी के अन्दर मुश्किल से मुश्किल ड्राफ्ट को जिस काबिले कदर, ईमानदारी के साथ, मेहनत के साथ और इल्म के साथ उन्होंने जांफिशानी से काम किया है, मैं उसके लिये मुबारकबाद देता हूं। इस तरह से दूसरे साहबान श्री जुगुलकिशोर खन्ना जी, दूसरे साहबान के नाम से मैं वाकिफ नहीं हूं, मैं उनको भी मुबारकबाद देता हूं। यह ड्राफ्ट कांस्टीट्यूशन जिसकी तीसरी रीडिंग हम लोग कर रहे हैं वह कोई बिल की तरह नहीं है। यह ड्राफ्ट कान्स्टीट्यूशन एक अजीब चीज है। यह मुल्क में बार-बार नहीं आता है और परमात्मा न करे कि फिर बहुत जल्द इस देश में नये सिरे से बने। प्रेसमैन रिपोर्टर साहबान और दूसरे दीगर साहबान और कर्मचारियों ने इस काम में किसी भी तरह से हिस्सा लिया है मैं हाउस की तरफ से उन लोगों का शुक्रिया अदा करता हूं।

इसके अलावा जब मैं कान्स्टीट्यूएन्ट असेम्बली के कर्मचारियों को छोड़ कर जब मैं मि. कामथ की तरफ देखता हूं जिनकी मेहनत का कोई ठिकाना नहीं है। जब मैं शिब्बन लाल सक्सेना का ख्याल करता हूं उनकी अनथक काम का ख्याल

[पंडित ठाकुरदास भार्गव]

करता हूं तो उनको भी मुबारकबाद दिये बगैर नहीं रह सकता। हमारे बृजेश्वर प्रसाद जी जिनकी युनिटरी सिस्टम की अमेण्डमेंट बार बार आती रही उनके इस्तकलाल और फ्री थाट की जिन्दा मिसाल है। मि.के.टी. शाह सोशलिस्ट फिलौसौफर हैं और जिन्होंने हमको अपने इल्म से और उसूलों के 'flow' से माला माल किया। मि. सिधवा जो कि पब्लिक कौजेज के एडवोकेट मशहूर हैं उन्होंने भी इसमें काफी हिस्सा लिया। डॉक्टर पंजाब राव देशमुख ने अपना नुक्ता निगाह पेश करने में पूरी कोशिश की। हमारे दोस्त व्याकरणाचार्य नजीरुद्दीन अहमद ने बड़ी मेहनत की इन सब लोगों के लिये हमारे दिलों में मुहब्बत है और मैं इन सब लोगों का शुक्रिया अदा करना चाहता हूं।

यह मुमकिन है कि इन साहबानों के वास्ते एक्सचेकर को कुछ ज्यादा खर्च करना पड़ा। इस कान्स्टीट्यूशन को बनाने में जिस मेहनत से काम किया गया अगर इस तरह से न होता तो हम ऐसा कान्स्टीट्यूशन जैसा अब यह है न बना सकते। फिर भी अखबारों में इसके बारे में कुछ का कुछ कहा गया है। मगर इन सब बातों के होते हुये भी इस काम को करने में इन सब लोगों ने अपना फर्ज अच्छी तरह से अदा किया।

मैं इसको छोड़कर जनाब वाला एक बुजुर्ग हस्ती का जिक्र करना चाहता हूं जिनके वास्ते दरअसल मेरे पास कोई अलफाज नहीं हैं कि मैं अपनी अकीदत उनके बारे में पेश कर सकूं।

जनाब वाला उन अमेण्डमेण्ट से जो मेरे हिस्से में आई हैं उनसे जनाब को और हाउस को जरूर यकीन होगा कि मेरी आदत हरगिज हरगिज फ्लैटरी की नहीं है। लेकिन मैं अन्दर से मजबूर हूं कि इस वक्त जो सही बात है वह कहूं। मेरे वास्ते गैर मुमकिन है कि मैं सरदार वल्लभ भाई पटेल का पब्लिक शुक्रिया अदा न करूं। सरदार वल्लभ भाई पटेल वह एक शख्स हैं जिन्होंने एक अमेंडमेंट भी नहीं भेजी "but he has made the Constitution himself" सरदार वल्लभभाई पटेल ने सब कुछ मामले को इस खूबसूरती से सुलझाया है इस अच्छी तरह से सुलझाया कि मेरे ख्याल में शायद अगर उनको आरचीटेक्ट ऑफ इंडिया कहा जाये तो कुछ बेजा ना होगा। स्टेट्स के मामले में हाउस ने मौके ब मौके उनकी सराहना की है। लेकिन एक और सवाल इसके साथ जो कम अहमियत का नहीं है, अगर बराबर अहमियत का नहीं तो कम अहमियत का भी नहीं है, उसके सुलझाने में इस जादूगर ने जो तमाशा दिखलाया वह बिल्कुल और फैक्ट न होता तो नाकाबिल यकीन होता है। कोई और श्ख्स जो इस कान्स्टीट्यूएण्ट असेम्बली में न हो वह जाकर इस करिश्मे को बयान करे कि इस हिन्दुस्तान में अंग्रेज इतने मत मतान्तर के झगड़े छोड़ गये थे, माइनोरिटीज थीं, सैपरेट इलेक्टोरेट था, जिसका जहर फैलकर पाकिस्तान बना, अछूत कहते थे कि हमको हिन्दू हकूक नहीं देते और अलैहदगी चाहते थे, इस तमाम मसले को हमारी इन माइनारिटीज को जिस लियाकत और जिस खूबी से, जिस टैक्टिक्स और जिस पालिसी से, सरदार पटेल ने खत्म किया मेरे ख्याल में उसकी मिसाल कहीं भी मिलनी मुश्किल है। जिस वक्त माइनोरिटीज सब कमेटी पहले पहल बनी तो मैं हैरान था कि इतने सब मामले किस तरह सुलझेंगे। हमारे सरदार पटेल ने इस सारी माइनारिटीज कमेटी को माइनोरेटीज मेम्बर्स से भर दिया। अगर आप उस फेहरिस्त को मुलाहिजा फरमायें कि उसमें कितने मेम्बर माइनोरिटीज के थे तो आप हैरान हो जायेंगे कि किस तरह यह फैसला

वहां माना जा सकता था कि जहां आकर मेम्बरान कहें कि हमको सेपरेट इलेक्टोरेट नहीं चाहिये, हमको रिजर्वेशन नहीं चाहिये। सिख कहते थे कि हमको सेपरेट एलोक्टोरेट और रिजर्वेशन नहीं चाहिए हमारे अछूत भाइयों ने कहा कि हमको रिजर्वेशन दस वर्ष से ज्यादा के लिये नहीं चाहिये।

जनाब वाला यह उन्हीं की मेहरबानी का फल है कि हम आज सर ऊंचा करके चल सकते हैं और कह सकते हैं कि इस बड़े मुल्क में इस तीस करोड़ के देश में अडल्ट फ्रेंचाइज होगा लेकिन एक ही इलेक्टोरेल रोल होगा। मैं कहता हूं कि यह खुद एक बड़ी भारी अचीवमेंट है और हमारे लिये एक नियामत है और इसके लिये मैं उनको मुबारकबाद पेश करता हूं और सिर्फ अपनी ही तरफ से नहीं बल्कि सारी असेम्बली की तरफ से मुबारकबाद देता हूं कि उन्होंने इस चीज को हमारे लिये मुमकिन बना दिया।

जनाब वाला मुझे इस बात का डर तो है मेरा बहुत सारा वक्त गुजर गया लेकिन सब से पहली चीज जिसकी तरफ मैं आपकी तवज्जह दिलाना चाहता हूं वह है हमारा प्रीएम्बुल। यह प्रीएम्बुल सचमुच जवाहरपारा है। यह प्रीएम्बुल हमारे सारे कान्स्टीट्शन की जान है। यह सारे कान्स्टीट्यूशन की कुंजी है और प्राबल्म के हल करने का सही यार्डस्टिक है या तोल की तराजू है। मैं यह अर्ज करना चाहता हूं कि जहां तक इस प्रीएम्बुल का 395 दफाओं से ताल्लुक है तो इस प्रीएम्बुल के कांटे पर जो प्रावीजन्स दुरुस्त हैं वह फिलवाके हमारे वास्ते दुरुस्त हैं और जो इस कांटे पर दुरुस्त नहीं हैं वह सही नहीं हैं। गरीबनिवाज, सच तो यह है कि हमारे जवाहर लाल ने जो हमारा जवाहर भी है और लाल भी है इस जवाहरपारे को इस पोटरी में प्रोज को इतना मुकम्मिल बनाया है। और यह खुद perfection बन गया है कि मिस्टर कामथ का खुदा इसमें न धंस सका क्योंकि परफेक्शन में ईजादी या कमी नहीं हो सकती।

जनाब वाला, मैं तो चाहता हूं कि कि इस कसौटी पर सारे प्रावीजन्स देखे जायें और इस कसौटी से फैसला करें कि हमारा कान्स्टीट्यूशन दुरुस्त है या नहीं। मैं अर्ज करता हूं कि हमारी तीन साल की मेहनत में हमने जरूर एक ऐसा कान्स्टीट्यूशन बनाया है जिसपर कि हम नाज़ कर सकते हैं जिसको कि हम कम से कम टोलरेबली गुड कह सकते हैं। इसके अन्दर खामियां हैं इससे मैं इनकार नहीं करना चाहता और खामियों के वास्ते हम लड़ते रहे हैं लेकिन ताहम मुझे इसके कहने में जरा भी ताम्मुल नहीं है कि यह एक अच्छा कान्स्टीट्यूशन है जो दुनिया के कान्स्टीट्यूशनस में शामिल हो सकता है। सच तो यह है कि जैसा कि एक अंग्रेज ने कहा है कि लोगों को वैसी ही हुकूमत मिलती है जिसको कि वह डिजर्व करते हैं और ऐसा ही कान्स्टीट्यूशन हमको मिला है। इस कान्स्टीट्यूशन में हमारे तरक्की के रास्ते पूरे खुले हैं लेकिन यह ideal Constitution नहीं लेकिन हम तरक्की करके इसे बेहतर बनाऐंगे।

अब जनाब वाला, पेश्तर इसके कि मैं इसकी खराबियों की तरफ आपकी तवज्जह दिलाऊं मैं सबसे पहले एक बात की तरफ आपकी तवज्जह दिलाना चाहता हूं। अंग्रेज़ों ने हमारे दिमाग में यह डाल दिया था कि इस देश में प्यौर फेडरेशन होना चाहिये। जब राउंड टेबिल कानफरेन्स के मौके पर वहां पर यह सवाल उठा कि हिन्दुस्तान में किस तरह की हुकूमत हो तो वहां पर यह फैसला किया कि एक फैडरल सिस्टम होगा। मुझे वह दिन याद है कि जब कि सन् 1927 में All parties conference में हमारे बुजुर्ग श्री विजय राघवाचार्य ने जोर दिया था

[पंडित ठाकुरदास भार्गव]

कि भारत के भले के लिये Unitary system जरूरी है। गो वह आज यहां नहीं हैं लेकिन मुझे उनकी वह दिव्य मूर्तियों की यों याद आती है और मुझे खुशी है कि वह इस कान्स्टीट्यूशन को देखते तो खुश होते। आज वह इस unitary Federal system से जरूर मुतमईन होते। मैं यह मानता हूं कि यह प्योरली यूनीटरी कान्स्टीट्यूशन नहीं है। हमने गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट से बहुत बातें ली हैं, यह दुरुस्त है। हमको उसके अनुसार बहुत दूर तक चलना था। लेकिन जो हल गुत्थी का हमने निकाला है वह गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट का कान्स्टीट्यूशन का नहीं था। हमारा कान्स्टीट्यूशन इस वक्त यूनीटरी फेडरल है और इस देश की यह जरूरत थी कि इस देश में ऐसा कान्स्टीट्यूशन बने। मुझे खुशी है कि सबने सहमत होकर यहां ऐसा कान्स्टीट्यूशन बनाया और सेन्टर को इतना स्ट्रांग बनाया कि जितने की जरूरत थीं लेकिन साथ ही साथ यह अर्ज करना चाहता हूं कि इसके स्ट्रांग होते हुये, ओवर स्ट्रांग होते हुये भी ताहम जो इसका लाजिकल नतीजा निकलता था उसको हमने आगे नहीं निभाया क्योंकि हम तो एक ऐसे जमाने में पैदा हुये हैं कि प्रीवियस गवर्नमेंट के हालत को देख चुके हैं और उसके ख्यालात का हम पर असर है। इसमें कोई शक नहीं कि जो कान्स्टीट्यूशन है उसमें ऐसे प्रावीजन हैं कि जिससे अगर सेंटर चाहे तो प्राविन्स को हर तरह से दबा सकता है और यह इसकी खूबी है कि इसके अन्दर ऐसे अख्तियारात हैं। ताहम, हमारे चन्द दोस्तों ने फरमाया है कि जहां फंडामेंटल राइट्स हैं वहां ड्यूटीज भी हैं। इस असूल से सेन्टर की ड्यूटी भी अब बहुत ज्यादा है। इसमें शक नहीं कि यह सेन्टर की ड्यूटी है कि इस कान्स्टीट्यूशन के मुताबिक वह न यहां एक्सटर्नल अग्रेशन होने दे और न इंटरनल डिस्टरबेंसेज होने दे। लेकिन इसके आगे जाना पड़ेगा। जब दफा 356 आती है तो इसमें सेन्टर का फर्ज हो जायेगा कि प्राविन्सेज में ऐसा निजाम रखे ऐसे अहकामात सादिर करे कि जो प्राविन्सेज की गवर्नमेंट व लेजिस्लेचर की तबियत के बहुत विरुद्ध न हो। और मेरी समझ में इसके लिये एक नया वजीर भी सेन्टर में बनाना पड़ेगा। एक ऐसा वजीर बनाना पड़ेगा कि जो प्राविंशयल गवर्नमेंट्स की, प्राविंशयल एडमिनिस्ट्रेशन को ही देखे और उसके जिम्मे और कोई काम न हो। मैं तो चाहता था कि ऐसा वजीर प्राइम मिनिस्टर होना चाहिये लेकिन अगर प्राइम मिनिस्टर न हो तो वह मिनिस्टर विदाउट पोर्टफोलियो होना चाहिये। फिर एक ऐसा मिनिस्टर बनाना पड़ेगा जो कि सोशियल रिफार्म्स को देखे। इसी तरह की और बातें करनी पड़ेंगी जो इन जिम्मेदारियों को पूरा कर सकेंगी।

अब इसको छोड़ कर मैं जनाब की तवज्जह दो तीन और छोटी-छोटी चीजों पर दिलाना चाहता हूं। उनमें इस देश ने फिलवाके अपने को rediscover कर लिया, पुराने भारत को हमने पा लिया। नाम तो हमने देखा है "इंडिया यानी भारत" जिस पर कि कुछ लोगों ने आपत्ति भी की। मैं तो इतनी आपत्ति नहीं करता। सच तो यह है कि हम दुनिया से बाहर नहीं रह सकते। आज हमारा इतना सम्बन्ध सैकड़ों वर्षों का विलायत वालों के साथ और दुनिया वालों के साथ हो गया है। हम दुनिया में इंडिया ही रहेंगे, और अपने देश में अपने दिलों के अन्दर, अपनी सोल के अन्दर भारत भारत ही रहेगा। तो इस तरह इन दोनों चीजों का मेल हुआ है। दुनिया हमको इण्डिया के नाम से पुकारेगी और हम अपने को भारत के नाम से पुकारेंगे। ईस्ट और वेस्ट को ब्लेण्ड होना पड़ेगा। जो रूह है वह हमको मिल

गई और जैसे हमारे बुजुर्गों ने नाम रखा था वही नाम भारत हमने रखा। सिटीजनशिप जो इस विधान में दी गई है वह हमने आज के ही सिटीजन्स को नहीं दी है बल्कि हम इसमें दूर चले गये हैं, काफी दूर चले गये हैं और मुझे खुशी है कि पचास साठ लाख आदमी जो पाकिस्तान से उजड़ कर यहां आये उन सबको बिना किसी तकलीफ के इस कान्स्टीट्यूएंट असेम्बली ने अपना सिटीजन बना लिया। और इतना ही नहीं, जो पाकिस्तान चले गये, वहां से जो वापिस आये इनमें से जो गवर्नमेंट ऑफ इंडिया के पास लेकर आये उनको हमने अपना सिटीजन बनाया। बेशक इसमें कोई शक नहीं कि कानून की रूह से पांच वर्ष तक इन्तजार करना चाहिये था। मैं समझता हूं कि अगर वह इस देश में रहना चाहते हैं, कोई फर्क नहीं, वह यहां से चले गये, तो हम इस देश के रहने वालों को सिटीजनशिप राईट देंगे। फंडामेंटल राइट्स के बारे में हाउस को मालूम है कि मैं बहुत लड़ता आया हूं और हाउस ने मेरी तरमीम दफा 19 शब्द reasonable मंजूर करके उनको जसटिसिएबल बना दिया है। यह फंडामेंटल राईट्स तथा डाईरेक्टिव प्रिंसिपल यह दोनों के दोनों सारे कान्स्टीट्यूशन की जान हैं। आप इन दोनों को मिला दीजिये और अगर यह दोनों कायम हो जायें तो मुझे कोई शुबहा नहीं है कि हम महात्मा जी का रामराज्य कायम कर सकते हैं। और इन दोनों राईट्स के बारे में इस हाउस का फैसला जो है वह एक माईलस्टोन है। फंडामेंटल के जरिये जितना रास्ता हम तय कर चुके हैं वहां तक हम कामयाब हुए—directive principles उस चीज के जरिये, बाकी रास्ते तय करना है। हमने फंडामेंटल राईट्स पूरे हासिल नहीं किये। समता का असूल तो पास किया, अछूतपन दूर किया लेकिन पूरे हक न मिल सके।

मैं अदब से अर्ज करूंगा कि जो हमने अपना प्रीएम्बुल पेश किया है उसके अन्दर क्या चीज है। उसके अन्दर है डिगनिटी ऑफ दी इन्डिवीजुएल ऐण्ड यूनिटी ऑफ दी नेशन। हमारे इस आईडियल में जनाब वाला, मुलाहिजा फरमायें कोई जगह किसी किस्म की नैरो प्राविन्शियलिज्म के वास्ते नहीं है। कम्युनेलिज्म की जगह इस देश में नहीं है। कानून के सामने समानता फंडामेंटल राईट्स में दर्ज है और प्रीएम्बुल में व्यक्ति का ऊंचा दरजा करने व सारी कौम के एकता का सबक है। धर्म, जाति और सूबे की बुनियाद पर कोई फर्क नहीं माना गया है। फंडामेंटल राईट्स जो जनरल राईट्स हैं वह इस किस्म के राईट्स हैं जिनके अन्दर कोई एखतिलाफ हरगिज नहीं कर सकता। ड्यू कोर्स में हम इन हकूक को और आगे ले जायेंगे। और मैंने पार्टी में इसके वास्ते बहुत लड़ाई भी की थी। मैं जानता हूं कि हम उसे उतनी दूर तक नहीं ले जा सके जितनी दूर तक ले जाना चाहते थे। लेकिन मुझे इस का जरा भी अफसोस नहीं है। क्योंकि जो दफा 19 में लफ्ज रीजनएबुल रेस्ट्रिक्शन लिखा हुआ है इसमें करीब 75 फीसदी due process का असूल मौजूद है और जो फ्रीडम दफा 19 में मौजूद है उसको न तो गवर्नमेंट और न लेजिसलेचर उसको अपने हाथ में ले सकती है। दफा 19 में पब्लिक के हक महफूज हैं। और मुझे खुशी है कि इसके अन्दर ड्राफ्टिंग कमेटी के प्रेसीडेण्ट साहब डॉक्टर अम्बेडकर ने हमारे साथ इत्तिफाक किया। इसी तरीके से जो दूसरे हुकूक दफा 21 व 22 के अन्दर दिये गये उसके अन्दर भी हम बहुत दूर तक गये हैं। मुझे कोई इस बात में शुबहा नहीं है कि हमने जितने फंडामेंटल राईट्स दिये हैं वह हमने काफी दिये हैं। लेकिन इसमें शक नहीं है कि साथ ही साथ जितनी दूर तक जाना चाहते थे नहीं जा पाये हैं।

[पंडित ठाकुरदास भार्गव]

गवर्नमेंट ऑफ इंडिया एक्ट में कोई ऐसे हक नहीं दिये गये थे। विलायत में फंडामेंटल राईट्स कहां विधान में दर्ज हैं। यह तो जब ही हो सकता है जब लोगों में वह जहनियत पैदा हो जाये, जो दूसरे आजाद मुल्कों में पाई जाती है। फंडामेंटल राईट्स के साथ साथ हमारी सिटीजन्स की ड्यूटीज भी होती है। मुझे उम्मीद है कि हम अपने हिन्दुस्तान को जानते हैं हम अपने कलचर को जानते हैं। मुझे कोई शुबहा नहीं है कि हम सिवाय आयन्दा तरक्की के और कुछ न करेंगे हमारा पवित्र देश अधोगति को नहीं जा सकता और हमारा देश आयन्दा बहुत तरक्की करेगा और हर एक आदमी को पूरे हक हासिल होंगे।

जब मैं इस फंडामेंटल राईट्स को छोड़कर डाईरेक्टिव प्रिंसिपल पर जाता हूं, तो मेरी खुशी की कोई इन्तहा नहीं रहती है। अभी कल मेरे भाई श्री लक्ष्मी नारायण साहू ने कहा कि इसमें फलां फलां चीज नहीं है, इसके अन्दर चरखा नहीं है। cottage industries नहीं है prohibition नहीं है लेकिन आप 36 से 51 दफे तक डाईरेक्टिव प्रिंसिपल को पढ़िये उसमें किस चीज की कमी है, उसमें सारी चीजें मौजूद हैं। मैं श्री साहू जी को बतलाऊं उसमें प्रोहिब्शन मौजूद है, उसके अन्दर कौटेज इंडस्टरीज मौजूद है, उसमें वह सारी चीजें मौजूद हैं, जो कि एक व्यक्ति को डिगनिटी और कौम को यूनिटी देता है। और आखिर में जो काउ प्रोटक्शन का अमेंडमेंट आया, वह एग्रीड अमेंडमेंट था, और सारा देश उसके पक्ष में होगा। उसके अन्दर इतना ही सवाल नहीं है जिसके कि हम हमेशा से हर एक हिन्दू व मुसलमान जिस चीज के कायल हैं, वह यह है कि हम गाय को बहुत अच्छा समझते हैं, उसके अन्दर सोलह आने हमारा और ड्राफ्टिंग कमेटी का व्यू पाइंट मौजूद है और मुझे खुशी है कि हाउस ने जान कर आखिर में उन सब गलतियों को एक तरह से हटा दिया, जो कि शुरू में उसके अन्दर थीं। अगर मैं आप साहबान की तवज्जेह दीगर मामलात की तरफ दिलाऊं। जनाब वाला, हमने इस कान्स्टीट्यूशन में सिर्फ इतना ही नहीं कि आपने सुप्रीम कोर्ट को सिर्फ इस कदर आजादी दी जिस कदर कि पहले हमारे कोर्ट्स के अन्दर थी। मेरा तो दावा है कि सुप्रीम कोर्ट को पहले से ज्यादा आजादी दी गई है। सुप्रीम कोर्ट को लोगों के हकूक को महफूज रखने की आजादी पहले की बनिस्बत ज्यादा मिली हुई है। मेरा निवेदन यह है कि जो प्रिवी कौंसिल को जूरिस्डिक्शन दिया गया है, वह क्रिमिनल जुरिस्डिक्शन हमने सुप्रीम कोर्ट को दे दिया है, वह किसी तरह से कम नहीं किया गया है और उसको पूरा अख्तियार दे दिया गया है। सुप्रीम कोर्ट convention से अपने अख्तियार रोज बरोज बढ़ाती भी रहेगी। मुझे कोई शुबहा नहीं है कि सिविल लिबर्टीज जो इसमें दी हुई है, वह किसी भी मुल्क से कम नहीं है। सर अल्लादी चाहते थे कि यहां पर ड्यू प्रोसेज का असूल लागू न हो। मुझे खुशी है कि ड्यू प्रोसेज भी 75 फीसदी से ज्यादा कायम हो गया है। इस विधान में आजाद Comptroller & Auditor General का इंस्टीट्यूशन कायम किया गया है जिससे हिसाब की जांच पड़ताल आजादाना होगी और पहले की तरह बिला अखत्यार रुपया खर्च न होगा। इसी तरह पब्लिक सर्विस कमीशन और उसके नीचे स्टेट्स कमीशन, का प्रबन्ध किया गया है मुझे खुशी है कि यह सब अकवारे उतने आजाद कर दिये गये हैं, जितने पहले नहीं थे। हर एक चीज के विषय में हमने सेंट्रल इन्स्टीट्यूशन बनाया, और फिर प्रोविन्सेस का भी वह इन्तजाम किया कि

वहां स्टेट्स के अन्दर भी स्टेट्स लेजिस्लेचर मौजूद हैं, और हर तरह की वहां रिसपांसिबल गवर्नमेंट मौजूद हैं जिसके वजीर लेजिसलेचर को जिम्मेदार है। अलबत्ता गवर्नर अब नामजद होंगे। क्योंकि जनाब वाला, इलेक्टेड गवर्नरस इस यूनिटरी सिस्टम के साथ लग्गा नहीं खाते। और जो पहले गलती की थी बाद में वह गलती भी सही कर ली गई। हमें इस विधान को बनाने में तीन साल जरूर लगे, लेकिन इन तीन सालों में जिस कदर कदम हमने आगे बढ़ाये उसका अंदाजा आप नहीं कर सकते। अगर सन् 46 में जब यह असेम्बली बैठी, तभी आईन पास हो जाता, तो इसमें सेप्रेट इलेक्टोरेट रहता, इसमें 562 स्टेट होती, इसमें वह सारी खराबियां होतीं, जो हमें बरसों में ब्रिटिश गवर्नमेंट से मिली थी।

मैं उनसे सहमत नहीं जो कहते हैं कि हम पहले से गिर गये हैं। मैं तो यह महसूस करता हूं कि दरअसल हमारा स्टैण्डर्ड ऑफ लिविंग पहले के मुकाबले में बहुत अच्छा हो गया है। हम लोग यह दिन अपने आगे देख रहे हैं। मेरे कहने की मंशा यह है कि जो जो हम चाहते हैं सब कुछ हमारे कान्स्टिट्शन में इन्कारपोरेटेड है। हमने यहां इसके अन्दर टैक्सेशन के असूल बनाये वहां आयन्दा जांच के लिये इसके अन्दर फिस्कल कमिशन के लिये भी रास्ता खुला रखा जो जल्द मुकर्रर किया जायेगा। मैं कोई चीज ऐसी विधान में नहीं पाता हूं जिसका ठीक प्रबन्ध न किया गया हो।

जनाब वाला, मैं बहुत ज्यादा वक्त इस हाउस का नहीं लेना चाहता। मैं इस मसले को यहीं खत्म करता हूं। आखिर में सिर्फ इस कदर मैं कहना चाहता हूं, कि आखिरी चीज यह है कि कान्स्टीट्यूशन कागज पर बनते हैं। लेकिन कागज के कान्स्टीट्यूशन से आगे काम नहीं चलता, काम चलता है स्प्रिट से जिसके अन्दर कान्स्टीट्यूशन पर चला जाता है। इस वास्ते आज इस कान्स्टीट्यूशन को खत्म करते वक्त इतना कहना चाहता हूं कि 26 तारीख को जो जो मेम्बर इस पर दस्तखत करेंगे, उनको याद रखना चाहिये, कान्स्टीट्यूशन का बनाना मामूली छोटा-सा काम था, हमारा असली काम यह है कि हम इस कान्स्टीट्यूशन को इस तरह से चलायें जिसके अन्दर हमारा देश सचमुच आजादी की तरफ बढ़े और देशवासियों को सुख मिले और सम्पत्ति बढ़े। मैं एक लफ्ज सिर्फ एक चीज़ के बारे में जो मुझे बहुत अजीज हैं, जनाब की इजाजत से और पेश कर दूं। हमने शड्यूल्ड कास्टस को बहुत कुछ दे दिया, रिजर्वेशन दे दिया। उनके वास्ते दफा 335 बनाई जिसके अन्दर उन्हें नौकरियों के वक्त उनके हक पर विचार का आश्वासन दिया। दफा 16 को डाल दिया कि उनके वास्ते नौकरियों का रिजर्वेशन हो सकता है। लेकिन मुझे वह दिन नजर नहीं आता जिसमें बैकवर्ड क्लासेज के वास्ते गवर्नमेंट रिजर्वेशन करेगी। मैं तो यह चाहता हूं कि अगर हम वाकई महात्माजी की क्लासलेस सोसायटी बनाना चाहते हैं तो हममें से हर एक जो विधान पुस्तक पर दस्तखत करे यह समझे कि वह अपने आप पर कसम खा कर दस्तखत करे, यह समझ कर वह अपने आप पर कसम खा कर दस्तखत करता है कि हम दस बरस के अन्दर शेड्यूल्ड कास्टस को व backward class को अपने बराबर ले आयेंगे। जो शख्स उसके ऊपर यहां दस्तखत करेगा लेकिन अमल नहीं करेगा, उसका अमल सच्चा नहीं होगा।

[पंडित ठाकुरदास भार्गव]

मैं आखिर में जनाब वाला का खुद शुक्रिया अदा करता हूं, और सब कर्मचारियों का जिन्होंने इसके बनाने में हिस्सा लिया, और सब मेम्बरों का फिर शुक्रिया अदा करता हूं। मैं परमात्मा से दुआ करता हूं कि परमात्मा हमें अक्ल और तौफीक दे कि हम अपने देश की सेवा करते रहें और जैसे हमारे बुजुर्ग महात्मा जी व दूसरे बुजुर्ग देश की भलाई की कोशिश करते रहे वैसे ही हम सब भी करें।

***अध्यक्ष:** इसके पूर्व कि हम सब स्थगित हों मैं माननीय सदस्यों का ध्यान उस बात की ओर आकर्षित करना चाहता हूं जो थोड़ी देर पहले हुई थी जब कि एक माननीय सदस्य ने मेरा ध्यान किसी तथ्य की ओर आकर्षित करना चाहा था। मेरी यह इच्छा है कि माननीय सदस्य उस तथ्य का ध्यान रखेंगे। मैं यह आशा करता हूं कि सदस्यों की रुचि अपने भाषणों की अपेक्षा औरों के भाषणों में अधिक हो। उन्हें कम से कम मुझसे सहानुभूति रखनी चाहिए जिसे केवल दूसरों के भाषण ही सुनने होते हैं और अपना भाषण कभी नहीं सुनना पड़ता और यदि और कुछ नहीं तो कम से कम मैं यह आशा करता हूं कि वे सत्र में यहां सदैव उपस्थित रह सकें जिससे कि हमारे सामने ऐसी शिकायत फिर न आये।

इसके पश्चात् सभा शनिवार, 19 नवम्बर 1949 के दस बजे तक के लिये स्थगित हो गई।

———————

GIPD–HS-320 PSD–24–12–52–320